मुद्रक और प्रकाशक
इलाहाबाद लॉ जर्नल प्रेस, इलाहाबाद

प्रस्तावना

वीरपूजा की परम्परा आदिकाल से चली आ रही है, पर गणतत्र के इस युग मे नायको का गुणगान उन्हे देवी देवताओ के रूप में उछाल कर नही, वरन् ऐसे स्त्री पुरुषो के रूप मे किया जाना चाहिये जो उन्हे चारित्रिक सवलता और सकल्पशक्ति की दृष्टि से जन साधारण से ऊचा उठाते है। अतएव इस सग्रह में हमारे देश के कुछ प्रसिद्ध नेताओ के, जिन्होने स्वतत्रता सग्राम मे अर्ध-देवताओ के रूप में नही, वरन् मानवो की तरह भाग लिया है, जीवन तथा कार्यों को प्रस्तुत करने का यत्न किया गया है। निकटस्थ अध्ययन के आधार पर लिखित ये शब्दचित्र उन्हे प्रेमपात्र व्यक्तित्वो के रूप मे अकित करते है। इनमे उनके सद्गुण तथा उनकी विचित्रताये भी है जिनसे वे जनप्रिय है। यदि इन नेताओ के जीवन से नयी पीढी को उनके आदर्शों के अनुरूप आचरण करने की प्रेरणा मिली तो लेखक अपने श्रम को सार्थक समझेगा।

लेखक

विषय सूची



महात्मा गांधी

गाधीजी ऐतिहासिक लोकनायक थे जिन्हे हम सदैव कृतज्ञतापूर्वक स्मरण करेंगे। वह हमारे बीच नही है पर उनका सदेश भावी पीढियो को प्रभावित करता रहेगा। यह दुख की वात है कि ससार उनके सिद्धान्तो के अनुरूप आचरण करने में समर्थ नही हो सका। पर जब तक वह उनके सिद्धातो का पालन नही करता तब तक ससार में सुख शाति सभव नही है।

गाधीजी का व्यक्तित्व शक्तिशाली था। वह एक मसीहा थे जो भविष्य का आभास प्राप्त कर सकते थे और वर्त्तमान को अपने साचे मे ढाल सकते थे। वह प्रेम-पात्र, सम्मान-पात्र स्वामी थे जिनका अनुगमन किया जाता था। उनके पास कोई अस्त्र-शस्त्र नही थे, फिर भी वह श्रेष्ठ सेना नायक, सर्वोच्च गुण सम्पन्न सेनापति और कुशल व्यूह रचयिता थे। उनकी कार्य प्रणाली शुद्ध और कार्य-विधि असाधारण थी। वह अपने प्रतिद्वद्वियो पर फौलाद के अस्त्रो से नही, वरन् प्रेम, विनम्रता और सदाशयता के अस्त्रो से प्रहार करते थे। चर्चिल ने एक वार कहा था—"इसे जो कभी इनर टेम्पिल (ग्रेट ब्रिटेन की एक कानून-शिक्षा-सस्था) दीक्षित वकील था और अब विद्रोही फकीर है, सम्राट के प्रतिनिधि से समता के आधार-पर समझौता-वार्त्ता चलाने के लिये वाइसराय भवन की सीढियोपर अध-नगे चढते हुए देखकर ग्लानि और लज्जा उत्पन्न होती है।" पर चर्चिल को अपने वक्तव्य की मूर्खता अनुभव करनी पडी। अब समस्त ससार जानता है कि परमात्मा का यह प्रिय पुत्र किसी भी मानव से समता के आधार पर वात कर सका। वह अपने युग के महा मानव थे। उनके समकालीन महापुरुषो का कोई भी स्थान और पद क्यो न रहा हो, पर वे उनके समक्ष छोटे मालूम पडते थे। जिन्होने उनकी निन्दा की उन्होने भी आखिर उनकी प्रशसा

की। उनके व्यक्तित्व मे कोई जादू था जिसके आकर्षण को रोका नही जा सकता था। उनके कार्यो मे चेतनाप्रद मौलिकता थी। हिंसा, क्रोध और घृणा से व्याप्त ससार में मानवता के लिये वही एक मात्र आशा की किरण थे। वही एकमात्र प्रकाश थे जो आस-पास के अंधकार और निराशा को दूर कर रहे थे। वह चले गये है पर वह अब भी हमारे प्रहरी है। "एक जाज्वल्यता चली गई। हमारे जीवन को तप्त और प्रकाशित करनेवाला सूर्य अस्त हो गया और हम शीत तथा अधकार में कापने लगे। वह हमे ऐसा अनुभव न करने देंगे। आखिर उस ज्योति ने जिसे हमने इतने वर्षो तक देखा, उस दैवी प्रतिभासम्पन्न व्यक्ति ने, हमें भी तो परिवर्तित कर दिया है।" हमे अपना विश्वास दृढ़ रखना चाहिये और उनके निर्देशानुसार कार्य करने का संकल्प करना चाहिये।

हमारा यह सौभाग्य है कि वह हमारे समकालीन थे। भावी पीढिया कठिनाई से यह विश्वास करेगी कि इस धरा पर ऐसे महापुरुष के पदचिह्न अकित हुए थे। हमे इस बात का गौरव और आनन्द प्राप्त है कि हमारे देश मे ऐसी महान-आत्मा का जन्म हुआ। वह अब भी हमारे बीच जीवित है। उनका जीवन स्वय के लिये नही, वरन् गरीबो और पीडितो के लिये था। वह जीवित है, क्योकि उन्होने दूसरो के लिये आत्मोत्सर्ग किया; वह जीवित है, क्योकि उनकी इच्छा जनता की मनसा के विपरीत रहने की नही थी। उनका जीवन-व्रत मानवता को उत्कर्ष पर पहुचाना तथा निराश आत्माओ मे प्रसन्नता की लहर उत्पन्न करना था। उन्होने अनेक लड़ाइया लड़ी और विजय प्राप्त की क्योकि उनका उद्देश्य पवित्र था। वह विजयी हुए, क्योकि वह दूसरो के हित के लिये लडे; वह विजयी हुए क्योकि उनकी मनसा शत्रु को भी धूल में मिलाने की नही थी। उनके लिये विजय का अर्थ प्रतिद्वद्वी का परास्त होना नही, वरन् अपने सिद्धातो की सफलता थी। अपनी मृत्यु मे भी उन्हे विजय-श्री प्राप्त हुई क्योकि उन्होंने अपने सिद्धातो के लिये देहोत्सर्ग किया। यदि अपने किसी उपवास

मे उनका देहात हो गया होता तो एक हिन्दू के हाथो उनकी हत्या होने की लज्जा से हम मुक्त रहे होते। भाग्य की यह दुखात विडम्बना है कि महानूतम हिन्दू हिन्दुत्व के नाम पर एक हिन्दू द्वारा मारा गया। श्रीमती सरोजिनी नायडू ने बडे ही मार्मिक शब्दो मे कहा था, "हिन्दू समाज के लिये शोक की बात है कि एक मात्र हिन्दू जिसकी हिदुत्व के आदर्शो और दर्शन के प्रति पूर्णत. निष्ठा थी, एक हिन्दू के हाथो हत्या हुई।"

/ वह मानवो मे महामानव थे। शक्ति के स्रोत थे। वह मसीहा की तरह बोलते थे और महान सेनापति की तरह कार्य करते थे। वह जहा बैठ जाते वह स्थान मदिर बन जाता, वह जो कुछ लिख देते वह धर्म-सदेश बन जाता। उनमे भेट खोज के लिये यात्रा के समान होती थी। वह कोई बात दबाते या छिपाते नही थे। मुझे ७ अगस्त सन १९४२ को उनकी बाते सुनने का सुअवसर मिला। मुझे उनका वह दृढ और शान-दार रूप स्मरण है जिसने ब्रिटिश राज को कडी चुनौती दी। वह मृदुलता से बोले। कदाचित् वह धीमे स्वर मे बहुत ही सधे शब्द बोले। फिर भी उनकी वाणी मे लोह सकल्प था जिसने समस्त देश को उत्तेजित तथा सघर्ष के लिये उत्प्रेरित कर दिया। वह बहुत देर तक बोले तथा श्रोता-गण अचल बैठे-बैठे उनके प्रत्येक शब्द को पीते रहे। उन्होने अपनी अगुली अपने सिरसे कुछ ऊची उठाकर कहा—"मच तैयार है। परदा गिरता है। समय आ गया है। करो या मरो।" वहा सन्नाटा छा गया। श्रोताओ ने उन्हे नमन किया। पडाल मे "महात्मा गाधी की जय" की ध्वनि और प्रतिध्वनि गूजने लगी। राष्ट्र सग्राम के लिये, क्राति के तूफानी सागर मे कूदनेके लिये तैयार था।

गाधीजी ने अपने देश को स्वतत्र कराया और अपने जीवन व्रत को पूरा किया। यह ऐसी विजय थी जिस पर ससार का कोई भी नेता गौरव अनुभव करता। परतु उनका केवल इतना ही जीवन व्रत नही था। उन्होने भारत को एक विशाल प्रयोगशाला बनाया जिसमे उन्होने सत्य के

राजेन्द्रप्रसाद

जब राजेन्द्रप्रसाद आपकी ओर देखते है तो ऐसा प्रतीत होता है मानो दो तीक्ष्ण, चमकदार नेत्र आप के हृदय के भीतर झाक रहे हैं। वह किसान जैसा मुखड़ा ऐसे नेत्रो से दैदीप्तमान है। इस महान एकनिष्ठ गाधीवादी के लिये सभी हृदयो मे अपार सम्मान और प्रेम प्राप्त है। वह अत्यत विनम्र है, और कभी कभी तो उनकी यह विनम्रता लोगो को बडे असमजस मे डाल देती है। अधिकतर लोग यह भी कहते नजर आते है कि वह ढीले व्यक्ति है और सरलता से दूसरो से प्रभावित हो जाते है। यह सच है कि झगडा करना उनके वस का नही और दूसरों पर अपनी राय लादना वह पसन्द नही करते, परन्तु यह कहना कि वह किसी वात को विना सोचे-समझे मान लेते है, गलत है।

राजेन्द्रप्रसाद एक राजनीतिज्ञ ही नही, वरन् प्रकाण्ड विद्वान् भी है। उनमे वचपन से ही साहित्य तथा अन्य विपयो के प्रति गहरी रुचि रही है और उनपर उनका पूर्ण अधिकार है। वह कई भापायें जानते है और सरलता से उनमें लिख वोल सकते है। उन्होने अपने विद्यार्थी जीवन मे भी उच्च स्थान प्राप्त किये। उन दिनो ऐसा विश्वास किया जाता था कि विहार वौद्धिक दृष्टि से वगाल मे हीन है। विहार के लोग वौद्धिक प्रतिभा के लिये विख्यात नही है, पर राजेन्द्रप्रसाद ने यह निर्विवाद रूप से प्रमाणित कर दिया कि विहार में भी उच्च वुद्धि विद्या निवान लोग है।

हिन्दी मे उनकी आत्मकथा हिन्दी साहित्य को एक महान देन है। आत्मकथा पढते समय उनके साहित्यिक व्यक्तित्व की झलक मिलती है। इसकी भापा सरल और स्पप्ट है। विचारो की अभिव्यक्ति में ईमानदारी है। यह गुण वहुत कम साहित्यिकोमे पाये जाते है। सरदार वल्लभभाई



राजेन्द्र प्रसाद

पटेल ने इस पुस्तक के बारे में लिखा था कि "उनकी आत्मकथा के हर पृष्ठ में राजेन्द्र बाबू की सरलता और विनम्रता की स्पष्ट छाप है। उनकी आत्मकथा भारतीय जन आंदोलन के गत ३० वर्षों का इतिहास है।"

राजेन्द्रप्रसाद स्वभावत सकोचशील है। उन्हें किसी पर क्रोध नही आ सकता। उन्होंने अपनी आत्मकथा में स्वय लिखा है कि "मै बचपन ही से दब्बू रहा हू और किसी बडे मामले मे तुरत कोई फैसला नही कर पाता।" जब गोखले ने राजेन्द्रप्रसाद को हिन्द सेवक समाज (सर्वेन्टस् आफ इडिया सोसाइटी) में सम्मिलित होने के लिये लिखा तो वह इसके लिये तुरत तैयार हो गये, परन्तु बडे भाई की राय की उपेक्षा करने की न उनमें इच्छा थी और न हिम्मत ही। परन्तु फिर भी उन्होंने अपने भाई को एक अत्यत विनम्र पत्र लिखा। इसमे उन्होने 'हिन्द सेवक समाज' मे सम्मिलित होने की अनुमति देने की प्रार्थना की जिससे उन्हे देश सेवा का पूरा अवसर मिल सके। इस पत्र से उनके महान व्यक्तित्व का पता चलता है। उन्होंने लिखा—"भाई साहब, भावुक होने के कारण आपके सामने बात करने की मेरी हिम्मत नही। आपको कठिनाई और परेशानी मे डालकर चला जाना कृतघ्नता होगी, परन्तु ३० करोड जनता के लिये मै कुछ त्याग करना चाहता हू। श्री गोखले की सस्था मे सम्मिलित होकर व्यक्तिगत रूप से मुझे कोई त्याग नही करना पडेगा। मुझको ऐसी शिक्षा मिली है कि मै जिस भी परिस्थिति मे रहू अपने को उसी के अनुकूल बना सकता हू। मेरा रहन सहन भी सादा रहा है और इसीलिये मुझे किसी विशेष सुविधा की आवश्यकता नही। जो कुछ भी मुझे सस्था से मिलेगा वही मेरे लिए पर्याप्त होगा। परन्तु मै यह नही कह सकता कि आपको त्याग नही करना पडेगा। आपकी बडी-बडी आशाये थी और एक क्षण मे उन पर पानी फिर जायगा। परन्तु इस क्षणभगुर ससारमें धन, पद और सम्मान सभी नष्ट हो जाता है। जितना ही धन बढता है, उतनी ही आवश्यकताये बढती जाती है। यद्यपि लोग कह सकते है कि उनको

धन से सतोष मिलता है परन्तु जिन्हें थोडा बहुत भी ज्ञान है, वह जानते है कि सतोप हृदय की वस्तु है, वाहर से नही प्राप्त होती। करोडपति की अपेक्षा एक गरीव आदमी अपने थोड़े पैसो से ही अधिक सतुप्ट रहता है। ऐसी स्थिति मे हमे गरीवी से घृणा नही करनी चाहिये। ससार के महान व्यक्ति सव मे गरीव रहे है। यद्यपि आरम्भ में लोगो ने उन्हे यातनायें दी और उनको घृणा-की दृप्टि से देखा, परन्तु मज़ाक उडानेवाले और यातना देनेवाले धूल में मिल गये, उनका कोई अस्तित्व नही, उनकी कोई वात भी नही करता, परन्तु जिन लोगो ने यातनाये भोगी और घृणा के पात्र वने, वे करोड़ो लोगो के हृदय और मस्तिप्क में वसते है। अगर जीवन की मेरी कुछ भी आकाक्षा है तो वह यह है कि मै देश की सेवा मे लगू। मुझ में मातृभूमि की सेवा के अतिरिक्त कोई भी महत्त्वाकाक्षा नही है। कौन राजा अथवा सावारण व्यक्ति है जो गोखले सा प्रभावशाली है अथवा उसको उनका सा ऊंचा स्थान और सम्मान प्राप्त है? फिर भी क्या वह गरीव व्यक्ति नही है?" यह पत्र इस वात का प्रमाण है कि वचपन से ही राजेन्द्रप्रसाद में अपनी मातृभूमि की सेवा करने की उत्कट अभिलापा थी और उन्होंने इसे सच कर दिखाया है। आपके भाई इस प्रार्थना को स्वीकार करने में असमर्थ रहे और एक आज्ञाकारी छोटे भाई की तरह आपने अपने वडे भाई के आदेश को शिरोधार्य किया। आप उक्त सस्था में सम्मिलित होने के लिए पूना नहीं गये।

राजेन्द्रप्रसाद का जन्म ३ दिसम्वर सन् १८८४ को हुआ था। उनका जन्म भारतीय काग्रेस की स्थापना के लगभग एक वर्प पूर्व हुआ था। आपके पिताका नाम मुशी महादेवसहाय था, जो जमीदार थे। राजेन्द्रप्रसाद अपने माता-पिता के पाचवें और सवसे छोटे लडके थे। आप वहुत ऊंचे कायस्थ खानदान से है। उन दिनो उनके गांव मे ऐसी मान्यता थी कि जो शराव पियेगा वह कोढी हो जायगा। राजेन्द्रप्रसाद ने अपनी आत्मकथा में लिखा है कि उनके परिवार के किसी सदस्य ने शराव नही पी और अव तक इस परम्परा का निर्वाह किया जा रहा है।

आप सन् १८९३ मे छपरा मे स्कूल मे दाखिल हुए। सन् १९०२ में कलकत्ता विश्वविद्यालय की इन्ट्रेंस (प्रवेशिका) परीक्षा में सर्व प्रथम आये। आप सर्व प्रथम विहारी छात्र थे जिन्हे यह विशिष्ट सफलता मिली। विहार की तत्कालीन प्रमुख मासिक पत्रिका "हिन्दुस्तान रिव्यू" ने राजेन्द्र-प्रसाद की प्रतिभासे प्रभावित होकर लिखा—'तरुण राजेन्द्र हर प्रकार मे एक प्रतिभाशील छात्र है। आशा है कि वह विश्वविद्यालय में अपनी पूर्ण सफलता के उच्च स्तर को वनाये रखेगा और एक दिन आयेगा जव वह प्रात के हाई कोर्ट (उच्च न्यायालय) मे न्यायाधीश का पद सुशोभित करेगा।' यह भविष्य वाणी अवश्य ही सच निकलती, अगर राजेन्द्रप्रसाद गाधीजी के प्रभाव मे आकर राजनीतिक आन्दोलन में न कूदते। वकालत मे उनकी आमदनी वहुत अच्छी थी और सारे वकीलो में उनके प्रति वहुत अधिक सम्मान था। आपके निर्मल चरित्र और ईमानदारी से सभी प्रभावित थे। उन्होंने वहुत पैसा कमाया परतु आय का अधिकाश वह गरीवो, जरूरतमदो और लोक हित के कार्यो को आर्थिक सहायता देने में खर्च कर देते थे। जव वकालत छोड कर वह असहयोग आन्दोलन मे सम्मिलित हुए उस समय उनके पास वैंक मे केवल १५) वाकी वचे थे। सन् १९०६ में आपने वी.ए पास करके एम ए. में अग्रेजी ली और प्रत्येक परीक्षा मे वह सर्व प्रथम रहे। वकालत आरभ करने से पहले आप मुजफ्फर-पुर मे कुछ समय तक प्रोफेसर (महा विद्यालय मे अध्यापक) रहे।

राजेन्द्र वावू जव ५ वी कक्षा मे पढते थे तभी १२ वर्ष की अवस्था मे उनका विवाह कर दिया गया था। उस समय उन्हे विवाह के वास्तविक महत्त्व का कुछ भी ज्ञान नही था जिसका उल्लेख उन्होंने अपनी आत्मकथा में किया है। उन्होंने अपनी आत्मकथा मे अपने विवाह के समय की मनोरजक घटनाओ का सजीव वर्णन किया है।

चम्पारन आदोलन ने विहार और राजेन्द्र प्रसाद का नाम सभी की जवानो पर ला दिया। ब्रिटिश अत्याचारो के शिकार नील की खेती करने

वालो की तरफ से गाधीजी के नेतृत्व में चम्पारन मे आन्दोलन शुरू हुआ। आदोलन सफल रहा और ब्रिटिश सरकार को घुटने टेकने पडे। जनता को विजय मिली और गाधीजी को मिले राजेन्द्रप्रसाद, जो आगे चलकर गाधीजी के प्रमुख सहयोगी वने। स्वर्गीय श्री सत्यमूर्ति ने राजेन्द्र प्रसाद की प्रशसा मे लिखा था कि "भारत मे उनकी कोटिके वहुत कम व्यक्ति है और यदि भारत के राजनीतिक जीवन का उत्तराधिकार आवश्यक समझा गया तो मेरा ख़याल है कि महात्मा गाधी का अगर कोई उत्तराधिकारी वन सकता है तो वह राजेन्द्रप्रसाद के सिवा कोई दूसरा नही हो सकता।"

राजेन्द्रप्रसाद काग्रेस के अध्यक्ष रह चुके है और उसके महामत्री के पद पर भी काम कर चुके है। जव आप कलकत्ता मे पढते थे उस समय सन् १९०६ के २२ वे काग्रेस अधिवेशन मे सम्मिलित हुए। राजेन्द्रप्रसाद ने एक स्वयसेवक के रूप मे अधिवेशन मे, कार्य किया। वह सन् १९३४ मे सर्वसम्मति से कांग्रेस के अध्यक्ष चुने गये। वाद में जव कभी भी कोई कठिनाई पैदा हुई तो उसे दूर करने के लिए आपका सहयोग लिया गया। त्रिपुरारी काग्रेस के वाद सभी की आखे आप की ही ओर लगी और एक लवे गरमा गरम वाद विवाद के वाद आप काग्रेस के अध्यक्ष चुने गए। आप काग्रेस महासमिति के सन् १९१२ से और कार्य समिति के सन् १९२२ से राष्ट्रपति पद ग्रहण करने के पूर्व तक वरावर सदस्य रहे। स्वतन्त्रता प्राप्ति के वाद आप भारत सरकार के खाद्य मत्री वनाए गए। इस पद पर आपने सफलतापूर्वक कार्य किया, और अपने सारे सहयोगियो को प्रभावित किया। आप सविधान सभा के अध्यक्ष चुने गए। आप को सभी का विश्वास और सम्मान प्राप्त है। राजेन्द्रप्रसाद को देखकर वहुत कम लोगो को विश्वास होगा कि वह विदेश भ्रमण भी कर चुके है। वास्तविकता यह है कि विदेशो में वह वहुत घूमे है। वह जर्मनी, इटली आदि वहुत से देशो की यात्रा कर चुके है। आस्ट्रिया के ग्रेज नगर मे एक शातिवादी सम्मेलन मे राजेन्द्रप्रसाद ने अहिंसात्मक प्रतिरोध के वारे में

भारतीय दृष्टिकोण रखना चाहा, परतु फासिस्त गुडो ने सम्मेलन की सभा मे मार-पीट मचा दी जिससे राजेन्द्रप्रसाद को गहरी चोटे आयी।

राजेन्द्रप्रसाद जबरदस्त सगठन कर्त्ता है और सगठन करने की उनकी शक्ति की परीक्षा बिहार भूकम्प के समय हुई। जेल मे जब आप बहुत बीमार पड गए तो उन्हे दवा कराने के लिए रिहा कर दिया गया। भूकम्प ने बिहार को बरबाद कर डाला था। पीडितो की चीखो से आप तिलमिला उठे। अपने गिरे स्वास्थ्य की परवाह न कर तन, मन, धन से सहायता कार्य मे जुट गए। आपने भूकम्प पीडितो की जो महान सेवा की उसकी सारे देश मे प्रशसा हुई। पडित जवाहरलाल नेहरू अपनी आत्मकथा में राजेन्द्रप्रसाद के बारे मे लिखते हैं—"देखने मे वह असली बिहारी किसान जान पडते है और जब तक उनकी निर्विकार दृष्टि और सौम्य चेहरे पर गौर न कीजिए तब तक पहली बार की मुलाकात मे वह प्रभावित नही करते। कोई भी व्यक्ति उनकी आखो और उनके चेहरे को नही भूल सकता। उनसे होकर सत्य झाकता है और इसमें कोई सदेह नही। आधुनिक दुनियादारी के हिसाब से वह देहाती, कुछ सकुचित दृष्टिवाले तथा भदेस है, परतु उनकी असाधारण प्रतिभा, उनकी निश्छल बात, उनकी कर्मठता और भारतीय स्वतन्त्रता के प्रति उनकी लगन ऐसे गुण है जिनके कारण केवल उनके प्रान्त मे ही नही, बल्कि सारे देश मे लोग उनकी इज्जत करते है। किसी भी प्रान्त मे किसी को नेतृत्व की ऐसी मान्यता नही प्राप्त है जैसी राजेन्द्रप्रसाद को मिली है। राजेन्द्र-प्रसाद के अलावा बहुत ही कम ऐसे व्यक्ति है जिनके बारे में यह कहा जा सकता है कि गाधीजी के सदेश को उन्होंने पूर्ण रूप से अपनाया है। यह सौभाग्यकी बात थी कि बिहार मे सहायता कार्य के लिए नेतृत्व करने के लिए उनके ऐसा व्यक्ति मिला। उनके प्रति आस्था ही का प्रमाण है कि सारे भारत से सहायता के लिए लम्बी रकमे मिल सकी। अस्वस्थ होते हुए भी वह सहायता कार्य मे कूद पडे। उन्हे अपनी शक्ति से अधिक काम

करना पड़ा क्योंकि प्रत्येक कार्यके वही सचालक थे और प्रत्येक व्यक्ति सलाह लेने के लिए उन्ही के पास दौडता था।" विहार के भूकम्प पीड़ितों के लिए राजेन्द्रप्रसाद आशा और साहसके प्रकाश स्तम्भ थे। विहार की जनता उनके इस कार्य को कभी भी नही भुला सकती।

राजेन्द्र प्रसाद वहुत अच्छे साथी है। उनके साथ रहकर आप सदैव उनकी ईमानदारी से भारी सहायता और सहयोग पर निर्भर रह सकते है। उनके चेहरे पर कुछ ऐसी आध्यात्मिक काति है जो प्रेरणा और साहस प्रदान करती है। वह कभी भी पदो के इच्छुक नही रहे, परंतु ऊचे पद उनके चरणो पर गिरते है और वह कर्त्तव्य समझ कर उनको संभालते है। वह अत्यंत उदार हृदय और क्षमाशील है। विश्वास की ज्योति सदैव उनके हृदय में जलती रहती है। उनके स्वभाव मे उग्रता और तीक्ष्णता का नाम निशान नही है। उन्होने अपने गुरू महात्मा गांधी का पूर्ण रूप से अनुसरण किया है और जव कभी उनसे मतभेद भी हुआ तव भी राजेन्द्र-प्रसाद ने उनकी वात को स्वीकार किया, क्योकि आपको यह विश्वास था कि वापू को गलती न करने की आदत है। आपने अपनी आत्मकथा में लिखा है कि "मुझे विश्वास हो गया था कि वापू वहुत ही दूरदर्शी है। इसलिए मैने अपने दृष्टिकोण को उनके सामने रखना नियम वना लिया है और यदि उन्होने उसको मान लिया तो ठीक ही है, वरना मै उनकी सलाह को स्वीकार कर लेता हू।"

स्वर्गीया श्रीमती सरोजिनी नाइडू ने राजेन्द्रप्रसाद के वारे में लिखा था कि "वावू राजेन्द्रप्रसाद के भव्य व्यक्तित्व के वारे मे स्वर्ण लेखनी को मधु में डुवोकर लिखना होगा। उनकी असाधारण प्रतिभा, उनके स्वभाव का अनोखा माधुर्य, उनके चरित्र की विशालता और आत्म त्याग के उनके गुण ने शायद उन्हें हमारे सभी नेताओ से अधिक व्यापक और व्यक्तिगत रूप से प्रिय वना दिया है। सच्ची श्रद्धांजलि के रूप मे मै इससे अधिक क्या कह सकती हू कि गाधीजी के निकटतम शिष्यों में उनका वही स्थान है जो ईसा मसीह के निकट सेंट जान का था।"

नही करते । स्वतन्त्रता-प्राप्ति के पहले काल मे सभी तरह के लोग उनसे सहायता पाने आते थे । कोई विमुख नही जाता था । मुझे सन् १९४२ की एक घटना याद है । एक कांग्रेसजन जिसने सत्याग्रह मे बहुत क्षति उठाई थी, आनन्द भवन आया । उसने नेहरू से सहायता मागी । नेहरू अपने कमरे मे गए और आगन्तुक के लिए नोटो की खासी अच्छी गड्डी अपने निजी सचिव के हाथो भेज दी । आगन्तुक ने वे नोट आनन्द भवनके वरामदे मे डाल दिए और कहने लगा कि "इतनी रकम से तो मेरी कठिनाइयां हल नही होगी ।" इस की सूचना नेहरू को दी गई । उन्होने गुपचुप कुछ और नोट भेज दिये । वह व्यक्ति "जवाहरलाल नहरू की जय" बोलता हुआ चला गया ।

× × ×

नेहरू को अपने नौकरो चाकरो से खास स्नेह है । चाहे जेलमे हो, चाहे प्रधान मंत्री के भवन मे, वह उनको भूलते नही । हाल में दो पुराने नौकरो की आखें करीव-करीव चली गई थी । इस की खबर मिलते ही नेहरू ने उनका इलाज करवाने के लिए यथेष्ट खर्चा भेज दिया । एक की आख तो कुछ-कुछ सुधर भी गई है । कुछ दिन हुए वह बमरौली हवाई अड्डे पर उनके दर्शन करने गया था । देखते ही कहा—"पडितजी को फिर से अपनी आखो से देखनेका वडा भाग है !"

अपने नौकरो की समस्याओ तक प्रवेश करने का उनका तरीका अनोखा है । अहमदनगर जेल से एक वार अपनी वहिन को जो नैनी जेल मे थी, एक पत्र लिखा कि आनन्द भवन के नौकरो का वेतन इसलिए वढा दिया जावे कि उनकी जिम्मेवारी नेहरू परिवार के वहां न रहने से काफी वढ गई है ।

जब नौकरो का काम कम हो जाय तव उनका वेतन वढाने की वात जवाहरलाल ही सोच सकते है !

नेहरू की उदारता ने मेरे मस्तिष्क पर गहरी छाप डाली है। एक छोटी सी घटना की स्मृति भुलाये नही भूलती। उदार व्यक्तियो की कमी नही है किन्तु नेहरू की उदारता का ढग निराला है। सन् १९४१ मे मै 'नेशनल हेराल्ड' का सम्वाददाता था। मेरे यहा टेलीफोन नही था। उसकी मुझे नितान्त आवश्यकता थी। इसका उन्हे पता चल गया। "नेशनल हेराल्ड" के सचालक मडल के यद्यपि वह प्रधान थे, फिर भी नेशनल हेराल्ड के अधिकारियो से न कहकर स्वय अपनी ओर से टेलीफोन लगवा दिया। एक दिन कहा—"सुनो, तुम्हारे यहा टेलीफोन नही है। मै हेराल्ड को तो लिख नही सकता, पर तुम उसे लगवा लो। खर्चे के लिए यह चेक लो।' फिर २ अगस्त सन् १९४२ को जब वह बम्बई मे काग्रेस कमेटी की ऐतिहासिक बैठक मे सम्मिलित होने जा रहे थे, मुझ से बोले— "तुम जानते हो, मै बम्बई जा रहा हू, कदाचित गिरफ्तार हो जाऊ। लो अगले दो महीनो के खर्चे के ४७ रुपये। किसी कारण तुम्हारा टेलीफोन न कटना चाहिए। और लो यह चिट्ठी, जब तुम्हे रुपये की आवश्यकता टेलीफोन के लिए हो, विजयलक्ष्मी पडित या इदिरा या बी एन वर्मा से ले लेना। पत्र इस प्रकार था—

श्री पी डी टडन,

आगामी दो मास के शुल्क मे ४७) दे रहा हू। भविष्य मे यह फोन कार्य करता रहे, अत अक्तूबर से आगे इसका मासिक शुल्क श्री विजय-लक्ष्मी पडित, इदिरा नेहरू-गाधी तथा बी एन वर्मा मे से किसी एक से लिया जाये।

ह ज नेहरू
२-८-४२

कितने ऐसे विचारवाले व्यक्ति होगे जो दूसरो पर बिना किसी प्रतिदान की आशा के भी कृपालु है!

× × ×

ठाकुर चन्द्रसिह गढ़वाली ने पेशावर की निरस्त्र जनता पर गोली चलाने से इकार कर दिया था। ब्रिटिश सरकार ने उन्हे आजन्म कारावास की सजा दी। वह सन् १६४१ में जेल से मुक्त हुए। उन दिनो नेहरू देहरादून जेल मे थे। चन्द्रसिह ने उन्हे पत्र लिखा और अपनी समस्याओ से अवगत कराया। नेहरू ने अनुभव किया कि इतने दिन जेल मे रहने के कारण चन्द्रसिह का वाहरी ससार से नगण्य सम्पर्क रहा। स्वाभाविकत. वह सहायता का स्वागत करेगा। उन्होने जेल से चन्द्रसिह को निम्न-लिखित पत्र लिखा—

"प्रिय चन्द्रसिहजी,

आपका पत्र मिला। आपके छूटने की खवर सुनकर मुझे खुशी हुई। आप आनन्द भवन मे वहुत इतमीनान से जव तक चाहे रहे, हमारे मेहमान होकर। मुझे अफसोस है कि मै खुद वहा नही हू आप से मिलने को। जव वापूजी आप को वुलावें आप वर्धा जाइए और जितने दिन तक कहे वहा उन के पास रहिए। फिर वापस इलाहावाद आकर आनन्द भवन में ठहरिए। मैने महादेव भाई से जिक्र कर दिया था।

आपका-
जवाहरलाल नेहरू"

× × ×

आनन्द भवन मे जव-जव वह आकर ठहरते थे, तो हर तरह के लोग उनसे मिलने आते थे। गरीव तो सहायता पाने जाते थे, त्रस्त तथा पीडित उद्धार कराने जाते थे। अधिकतर वहुत से लोग तो यो ही उनका मकान घेरे रहते थे और रह-रह कर 'जवाहरलाल नेहरू की जय' के नारे लगाते थे। इन आगन्तुको और नारों से उनके काम मे वाधा पडती थी किन्तु वह जानते थे कि केवल प्रेम ही इन आदमियो को वहा इकट्ठा कर देता था। समयानुसार वह वाहर वरामदे में भी निकल आया करते थे और वडी सद्भावना से

उनसे वाते कर लिया करते थे। एक हलकी सी मुस्कान के साथ-साथ वह सवसे कुछ न कुछ पूछ-ताछ जरूर ही कर लिया करते थे। नेहरू को ऐसे समय वातचीत करते देखने में वडा मनोरजन होता है, उनके मुखडे पर भावनाये द्रुतगतिमे वदलती रहती है, जैसे कि वह उन्हे सलाह देते है, सात्वना प्रदर्शित करते है, या कभी-कभी डाट फटकार भी सुनाते है।

× × ×

नेहरू पर अधिकतर जल्दी गुस्सा हो जानेका दोप लगाया जाता है। पर मुझे तो वह इसी अवस्था मे और प्रिय लगते है। यह सही है कि इस मे कुछ लोगो को चोट पहुचती है। और वह यह जानते है कि यह उन की कमजोरी है। पर वह क्षमा भी तो माग लेते है। क्या अपने सर्व प्रिय व्यक्ति की यह थोडी सी कमजोरी हम क्षमा नही कर सकते ? उन का गुस्सा चिरस्थायी नही है, और वह किसी का वुरा नही चेतते। इसी कमजोरी की एक वार चर्चा करते हुए उन्होने लिखा था—"मुझे भय है कि मै एक वटा ही निर्वल मानव हू, अधिकतर भूलें करता हू, और कभी-कभी कडे शब्द भी वोलता हू। पर कभी भी इस पर लोगो ने ध्यान नही दिया। उस को वहुत वुरा नही माना, यह लोगो की उदारता है।"

× × ×

सयुक्त राज्य अमेरिका के राष्ट्रपति रूजवेल्ट के व्यक्तिगत दूत कर्नल्ल जान्सन जव यहा पर थे, वह नेहरू से मिलकर मुग्ध हो गए थे। भारत छोडने से पूर्व अपने वक्तव्य में उन्होने नेहरू के प्रति श्रद्धा का पर्याप्त परिचय दिया था। क्रिप्स समझौता वार्त्ता के दौरान उन को नेहरू से मिलने का अधिकतर अवसर मिलता था। नेहरू को चूडीदार पैजामा मे देखकर उन्हे आश्चर्य होता था। एक दिन क्षमा याचना करते हुए नेहरू से पूछ ही वैठे, "धृष्टता क्षमा करके वतलाइए, श्री नेहरु कि आप इस पैजामे के अन्दर आखिर कैसे घुस जाते है ।" तुरन्त नेहरू ने कहा,—"पर

वे मुझपर ठीक-ठीक सरककर चढ जाते है।" लोग हँस पडे। वाद में नेहरु ने जान्सन को चूडीदार पैंजामे के पहिनने की कुजी वताई।

× × ×

नेहरू परिचर्या करने मे कुशल है। अहमदनगर जेल मे जव कभी कोई साथी अस्वस्थ हो जाता था तो वह रात-रात जगकर उसकी देख भाल करते थे। उन के एक साथी का कहना है कि "रोगी उन की उपस्थिति मे बड़ा विश्वास अनुभव करता है। उस का कष्ट वहुत कुछ कम हो जाता है।"

× × ×

नेहरू का स्वास्थ्य वहुत अच्छा है और उन्हे इस पर गर्व है। वह नियमित रूप से व्यायाम करते है।

वह परिश्रमशील है। अडचनो और कठिनाइयो से घवडाते नही है। उन का सामना करते है। स्वय को परिस्थितियो के अनुकूल वनाते है। इलाहावाद मे कडी गरमी पडती है। पर नेहरू ने इस गरमी का भी सामना किया है। स्वतन्त्रता-प्राप्ति के पूर्व वह आनन्द भवन में ऊपरी मजिल के एक कमरे मे गरमी के दिनो में भी अपने काम मे जुट रहते थे। इस कमरे मे खसकी टट्टिया भी नही लगवाते थे। एक दिन लाल-वहादुर शास्त्री उनसे मिलने ऊपर के कमरे में गए। कमरा वहुत ही गरम था। उन्होने नेहरू से कहा—"यह कमरा तो वहुत गरम है। आप दिन मे इस कमरे मे क्यो रहते है?" नेहरू ने कहा—"मुझे तो विशेप गरम नही लगता। आदत भी पड गई है। मुझे इस कमरे मे काम करना पसद है क्योकि वर्षो से इस मे काम करता आ रहा हूं।" शास्त्री ने कहा कि फिर भी इसकी गरमी कम करने के लिये कोई प्रवन्ध करना चाहिये। नेहरू ने उन का यह सुझाव भी टालते हुए कहा—"आदत डालनी चाहिये। आराम, और अधिक आराम के फेर मे नही पडना चाहिये।"

नेहरू के खान-पान का भी अपना ढग है। वह नियमित समय पर और थोडा खाते है। दावत में यदि कोई फल को काटकर या छीलकर उनके सामने रखे तो वह इसे गदी आदत समझते है। खाना बरबाद करने को भी वह बुरा समझते है। एक ही समय मे बहुत-सी खाने की चीज़ो को सामने रखना वह पसद नही करते। यदि कोई उन्हे अधिक खिलाने का यत्न करता है तो इसे भी वह नापसद करते है।

× × ×

नेहरू सभाओ मे सुप्रबन्ध चाहते है। अधिकतर देखा गया है कि यदि सभा मे कुछ गडबडी होती है तो प्रबन्धक यहा वहा दौडने लगते है। "बैठ जाइये" और "शात रहिये" के नारे लगाने लगते है। इससे और भी कोलाहल बढ जाता है। इससे नेहरू भडक जाते है। वह सबसे पहले यह चाहते है कि शाति स्थापना का काम पूर्णत उन्ही पर छोड दिया जाय। प्रबन्धक अपने स्थानो से न हटे तथा बिलकुल शात रहे। इसके बाद वह बाकी सब काम ठीक कर लेते है।

सभाओ में वह अपनी प्रशसा के मानपत्र कभी पसद नही करते। छिछली कविताओ तथा लम्बे चौडे मानपत्रो और मागपत्रो मे उन्हे घृणा है।

नेहरू चाहते हैं कि जनता अनुशासन और शिष्टता सीखे। वह चाहते है कि जनता अपने सम्मान के प्रति जागरूक हो उठे। वह उनसे पैर नही पकडवाना चाहते। वह पैर छूने को आदर की चीज़ नही मानते। उसे बुरी आदत मानते है और चाहते है कि लोगो की यह आदत छूटे।

एक दिन कुछ लोगो से बात चीत करते हुए कहा—"भाई आप लोग मेरे पैर क्यो छूते है? आप लोग किसी के पैर न छुआ करे। अपना सिर और अपनी कमर तनी रखिये, किसी के सामने झुकिये नही।"

× × ×

नेहरू बहुत सवेदनशील है। वह यह अच्छी तरह जानते है कि देशवासियो के हृदय मे उनके प्रति सच्चा प्रेम और सम्मान है। जनता उनके आदेशो का निर्विकार भाव से पालन करती है। वह यह भी भली-भाति जानते है कि वह जनता की सभी समस्याओ को अभी तक नही सुलझा सके है पर उन्हे जनता तथा उस की समस्याओ का सदैव ध्यान रहता है। एक बार उन्होने कहा—

"मुझे इतना मान और वैभव प्राप्त हुआ जितना कदाचित् ही किसी व्यक्ति को मिले। मै जनता के अपार प्रेम के बोझ से दब जाता हू। आपने मुझे प्रधानमत्री बनाया, यह निश्चय ही बड़े गौरव और दायित्व का पद है। भारत जैसे देश का प्रधानमत्री होना बहुत ही दायित्व-पूर्ण है। पर आपने मेरे प्रति जो सम्मान और प्रेम प्रकट किया है वह कदाचित् ही किसी प्रधानमत्री को प्राप्त हो। इसके लिए मै असीम आभारी हूं। आप ने मुझे जो जगह दी वह भारत की करोड़ो जनता के दिल और दिमाग में जगह है। मुझे इस पर आश्चर्य होता है। मैं अपने जीवन के साध्यकाल मे हू, पर एक पुरानी ज्वाला है जो मुझ मे अब भी प्रज्वलित है। जब तक मेरा शरीर भस्म नही हो जाता तब तक मै शक्ति भर जनता की सेवा करता रहूगा जिस ने मेरे प्रति इतना विश्वास और प्रेम प्रकट किया है।"

× × ×

नेहरू हमारी आशा और हमारा अभिमान है। हमारे युग की एक चुनी हुई अनुपम आत्मा है। संसार मे शायद ही कतिपय ऐसे उच्च मानव होगे जो अपनी आत्मा और व्यक्तित्व से इस प्रकार चमकते हो जिस प्रकार जवाहरलाल नेहरू।





सुभाषचन्द्र बसु

नेताजी सुभाषचन्द्र वसु

नेताजी सुभापचन्द्र वसु इतिहास के उस पृष्ठ की शोभा वढाते हैं जिसमें उनका नाम स्वर्णाक्षरो से अकित है। यह ओजस्वी देशभक्त, मातृभूमि का यह महान् लाल युगो युगो तक कहानियो और गीतो में स्मरण किया जायगा, जनता को पावन कार्यों और महान् त्यागो के लिये उत्प्रेरित करेगा। मातृभूमि की स्वतत्रता के लिये इस महान् देश-भक्त का जीवन एक नाटक है जिसमे नेताजी महानायक हैं। उन्होंने देश की स्वतत्रता के लिये सभी स्वतत्र शक्तियो का सघटन किया तथा उन्हे लक्ष्य की पूर्ति के लिये सर्वस्व वलिदान करने के लिये प्रेरित किया। कदाचित् ही किसी अन्य नेता में विद्रोही राष्ट्र के इतने गुण—प्रज्वलित देशभक्ति, विकलता और त्याग की ज्वलत भावना हो। वह अपने अनु-चरो मे कहा करते थे—"इसे कभी न भूलो कि सवसे वडा पाप गुलाम रहना है।" वह उन्हे यह भी याद दिलाते रहते थे कि "अनीति तथा अन्याय से समझौता करना सवसे वडा अपराध है।" वह यह भी कहा करते थे कि "सवसे वडा गुण विपमता के विरुद्ध सघर्प करना है, चाहे इसके लिये कुछ भी मूल्य क्यो न चुकाना पडे।"

भारतीय इतिहासकार भारतीय स्वतत्रता के इतिहास मे भारत से ब्रिटिश सत्ता को उखाडने मे नेताजी तथा उनकी आजाद हिन्द फौज के कार्यो का सगर्व उल्लेख करेंगे। पूर्वी एशिया मे नेताजी की गतिविधियो से ब्रिटिश सरकार आतकित थी। आजाद हिन्द फौज की पराजय के वाद भी वह भयभीत थी, क्योंकि आजाद हिन्द फौज की भावना जीवित थी तथा वह जनता मे फैल गई थी। यद्यपि आजाद हिन्द फौज परास्त हो गयी, परन्तु उसने विजय के लिये पथ प्रशस्त कर दिया।

नेताजी का जन्म २३ फरवरी सन् १८९७ मे कटक में हुआ। सन् १९१३ मे उन्होने कलकत्ता विश्वविद्यालय की मेट्रिक परीक्षा द्वितीय स्थान प्राप्त करते हुए उत्तीर्ण की। सन् १९१४ में अचानक वह आध्यात्मिक गुरु की खोज मे हरद्वार के लिये चल दिये, पर कुछ समय वाद वापस लौट आये और फिर विद्याव्ययन करने लगे। सन् १९१६ मे कलकत्ता के प्रेसीडेंसी कालिज के एक अध्यापक ओटन ने भारतीयों के प्रति कुछ अभद्र शव्द कहे, इस पर वसु ने उन्हे पीटा। इस घटना से वह कालिज से निकाल दिये गये। सन् १९१९ मे उन्होंने वी० ए० परीक्षा दर्शन मे आनर्स के साथ प्रथम श्रेणी मे द्वितीय स्थान प्राप्त करते हुए उत्तीर्ण की। सन् १९२० मे उन्होने आई० सी० एस० परीक्षा चतुर्थ स्थान प्राप्त करते हुए उत्तीर्ण की। वसु की दर्शन विपय में वडी रुचि थी। उन्होने सन् १९२१ मे केम्ब्रिज विश्वविद्यालय से दर्शन मे आनर्स की परीक्षा उत्तीर्ण की। उन्होने कुछ दिन सरकारी पद पर कार्य किया परन्तु उसे अपनी स्वतत्र प्रकृति के प्रतिकूल पाकर इससे पद त्याग कर दिया। इसके वाद उनकी गाधीजी से भेंट हुई। दोनो एक दूसरे से प्रभावित हुए।

सन् १९२१ के असहयोग आन्दोलन मे वह देशवन्धु चित्तरजनदास तथा मौलाना अवुलकलाम आज़ाद के साथ गिरफ्तार हुए। उन्हे छः महीने कारावास का दण्ड मिला। इसके वाद तो उन्हे कई वार जेल जाना पड़ा।

२९ जनवरी सन् १९३९ मे वह अखिल भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के अध्यक्ष चुने गये। सन् १९४० में उनका कांग्रेस की नीनि रीति से गहरा मतभेद हो गया तथा उन्होने पृथक दल 'फार्वर्ड व्लाक' (अग्रगामी दल) का सघटन किया। २७ जनवरी सन् १९४१ को यह प्रकट हुआ कि वह कलकत्ता के अपने निवास से रहस्यपूर्ण ढग से गुप्त हो गये। वहा से वह कावुल, वर्लिन, रोम और टोकियो पहुचे। उन्होने ब्रिटिश साम्राज्य-शाही के विरुद्ध युद्ध के लिये भारतीयो को सघटित किया। पूर्वी एशिया

के देशो के भारतीयो और भारतीय सेना के आत्म-समर्पित सैनिको का सघटन करके उन्होने आजाद हिन्द फौज निर्मित की। इस सेना को वडी सफलता मिली, परन्तु यूरोप मे युद्ध की स्थिति वदल जाने के कारण आजाद हिन्द फौज की कठिनाइया वढ गई। इस वीच दुर्घटनावश नेताजी की मृत्यु हो गई। उनकी मृत्यु के वारे मे विवादास्पद वाते कही जाती है। कुछ लोगो का विश्वास है कि वह जीवित है। पर कर्नल हवीव रहमान के कथनानुसार नेताजी की हवाई दुर्घटना मे मृत्यु हो गई। वह हवाई जहाज तैकोहू हवाई स्टेशन पर १६ अगस्त सन् १९४५ को गिर पडा। कर्नल रहमान का कहना है कि मै नेताजी के साथ उस हवाई जहाज मे था। नेताजी हवाई दुर्घटना से विलकुल विचलित नही हुए। दुर्घटना के कारण हवाई जहाज की पेट्रोल की टकी फूट गई तथा इस पेट्रोल की वौछार नेताजी की सूती खाकी वर्दी पर पड गई और उसमे आग लग गई। पर नेताजी किसी तरह टूटे हवाई जहाज से वाहर निकल आये। उनकी वर्दी अव भी जल रही थी। उन्होने अपने वुशकोट का कमरवद खोलने की कोशिश की। उनका चेहरा आग से जल गया था तथा लोहे से आहत हो गया था। कुछ क्षण वाद वह जमीन पर गिर पडे। वहा से उन्हे अस्पताल ले जाया गया। जापानियो ने नेताजी को वचाने के लिये शक्ति भर यत्न किये परन्तु वे असफल रहे। कर्नल हवीव रहमान का यह भी कहना है कि नेताजी ने अत मे कहा, "हवीव, मेरा अन्त वहुत निकट है। मै आजीवन देश को स्वतत्र करने के लिये सघर्ष करता रहा। देश की स्वतत्रता के लिये ही मै प्राण विसर्जन कर रहा हू। देश जाकर देशवासियो से कहना कि वे भारत का स्वतत्रता सग्राम जारी रखे। भारत स्वतत्र होगा और वहुत ही शीघ्र स्वतत्र होगा।" उनके शब्द भविष्य-वाणी की तरह सत्य सिद्ध हुए।

नेताजी आध्यात्मिक विश्वासवाले व्यक्ति थे। परमेश्वर मे उनका विश्वास, साहस और आशावादिता का अटूट श्रोत था। वह विना किसी

झिझक के शक्तिशाली से शक्तिशाली सत्ता के विरुद्ध डट जाते थे। आध्यात्मिक विश्वास से उन्हे शान्ति, दृढता, आत्म विश्वास तथा विनम्रता प्राप्त होती थी। जब वह सघर्षरत रहते थे, तब भी शाति और एकात की कामना करते थे। हिमालय तो उन्हे सदैव आमत्रण सा देता रहता था। उनमे सन्यासी के कुछ गुण थे। सिगापुर मे वह कभी कभी रामकृष्ण मिशन के स्वामीजी से मिला करते तथा स्रष्टा का ध्यान किया करते थे। कभी कभी वहुत रात वीते वह अज्ञात रूप में मिशन के प्रार्थना भवन मे हाथ मे माला लेकर वन्द हो जाते थे तथा घण्टो साधना किया करते थे। नेताजी के एक निकट साथी तथा अस्थायी आज़ाद हिन्द सरकार के एक मत्री श्री एस० ए० अय्यर के कथनानुसार उनके पास अपनी साधना के वाह्य प्रतीक एक छोटी गीता, एक छोटी तुलसीमाला तथा पढने का एक चश्मा था। ये एक छोटे से वटुए मे रखे रहते थे। इस वटुए के सम्वन्ध में उनके निजी नौकर के अतिरिक्त और कोई कुछ भी नही जानता था। नेताजी ईश्वर के वारे मे चर्चा नही करते थे। वह तो ईश्वर के सत्संग में जीवन व्यतीत करते थे।

नेताजी जव भारत मे थे तव कांग्रेस नेताओं और महात्माजी से उनके गहरे मतभेद थे। वह उनकी नीति से सहमत नही थे। उनका विश्वास था कि देश को स्वतंत्र करने के लिये विदेशी सहायता की आवश्यकता थी। इसे भारत के उनके दूसरे सहयोगी मानते नही थे। इसके वावजूद उनकी गाधीजी मे श्रद्धा थी। पर वह उनकी अहिसा मे विश्वास नही करते थे। जव वह देश के वाहर काम कर रहे थे तव भी गाधीजी के प्रति वडा आदर भाव रखते थे। उन्होने अपने एक रेडियो भाषण मे कहा था—"हे राष्ट्रपिता, इस पावन स्वतंत्रता सग्राम मे हम आपकी शुभ कामनाये तथा आपका आशीर्वाद चाहते है।" ये शब्द उन्होने ६ जुलाई १९४४ को रेडियो से महात्मा गांधी के नाम सदेश मे कहे थे। यह संदेश उस समय प्रसारित किया गया था जव आज़ाद हिन्द सेना

भारतीय भूमि पर युद्ध कर रही थी। उन्होने कहा—"मै उस प्रचार से अवगत हू जो हमारा शत्रु मेरे विरुद्ध कर रहा है। केवल वही व्यक्ति कठपुतली हो सकता है जिसमे आत्म सम्मान और आत्म गौरव की भावना नही है। मेरे घोर शत्रु भी यह कहने का साहस नही कर सकते कि मै राष्ट्रीय सम्मान और आत्म गौरव वेच सकता हू ! . ... इस समय आजाद हिन्द फौज अनेक कठिनाइयो के वावजूद भारत भूमि पर युद्ध कर रही है तथा धीरे धीरे, पर निश्चित रूप से प्रगति कर रही है। यह सशस्त्र सग्राम तव तक चलता रहेगा जव तक कि भारत से सभी अग्रेज वाहर नही निकाले जाते तथा हमारा तिरगा राष्ट्रीय झण्डा दिल्ली के वाइसराय भवन पर शान के साथ नही लहराता।"

नेताजी भारत से वडे रहस्यपूर्ण ढग से गये। पुलिस उन पर वडी कडी नजर रखती परन्तु वह उसकी नज़र से वच निकले। उनकी जर्मनी, रोम तथा टोकियो जाने की कहानी रोमाचक जीवट, महान् साहस तथा दृढ सकल्प से ओत प्रोत है। नेताजी के शत्रुओ ने उन्हे जर्मनी और जापान की कठपुतली कहा, परन्तु उनके देशवासी जानते है कि उनका एकमात्र उद्देश्य भारत से ब्रिटिश साम्राज्यशाही का उन्मूलन और देश को स्वतत्र करना था। वह ऐसे महापुरुष तथा देशभक्त थे जो किसी की कठपुतली हो ही नही सकते थे। आजाद हिन्द फौज के भारत, कूच के समय उन्होने अपने अनुचरो से जो शब्द कहे थे वे अव भी कानो मे गूजते से है। उन्होने कहा था,—"उन पर्वतो के उस पार, उन नदियो के उस पार हमारी भूमि है, वह भूमि जहा हम पैदा हुए है, जहा हम शीघ्र ही वापस पहुचेगे। सुनो, भारत पुकार रहा है। भाई भाई के लिये पुकार रहा है। आपका कूच दिल्ली मार्ग पर—विजय मार्ग पर आरम्भ हो रहा है। इस मार्ग पर मै आपको भूख, प्यास, कष्ट और अन्त मे मृत्यु के अतिरिक्त और कुछ देने का वचन नही देता। यदि आप सव इसके लिये तैयार हो तभी मेरे साथ चलिये और हम साथ साथ विजय पथ पर आगे वढेगे।"

345

नेताजी सुभापचन्द्र वमु असाधारण ओज और माधुर्य के मिश्रण थे। उनका गत्यात्मक तथा प्रभावशाली व्यक्तित्व था जो लाखो जनता को उनके नेतृत्व मे अनुपम साहस तथा वीरता के कार्य करने के लिये प्रेरित करता था। छोटे लोग भी जव उनकी झलक पाते तथा वातें सुनते तो उनमे पूर्ण विकास हो जाता था। वे अपनी पूर्ण आंतरिक शक्ति अनुभव करने लगते थे। उनकी उपस्थिति मे स्वार्थी लोग भी उदार तथा कायर भी वीर वन जाते थे। उनकी लज्जालु और सरल मुस्कान, उनकी माधुर्य भरी दृष्टि वडी मनमोहक थी तथा उसका स्त्री-पुरुपो के हृदयो पर वडा प्रभाव पडता था। वे उनके सहज ही प्रशसक और अनुचर वन जाते। वह उन्हे गौरवशाली कार्य करने के लिये प्रेरित करते। वह महान् नेता, असाधारण देशभक्त और भारत के एक महान् सपूत थे।





जे० बी० कृपालानी

आचार्य कृपालानी

भारतीय राजनैतिक और बौद्धिक क्षेत्र मे आचार्य जीवतराम भगवानदास कृपालानी एक ऐसे व्यक्ति है जिन की ओर दृष्टि उठते ही अटक जाती है। कारण यह नही है कि उनका सौन्दर्य आखो को बरबस थाम लेनेवाला है, वरन् उनके मुख पर अकित चिह्न दृढ-निश्चय और प्रचुर साहस प्रकट करते है। कृपालानी एक दुबले पतले, नुकीले मुखवाले व्यक्ति है। उनकी तीक्ष्ण दृष्टि किसी बुभुक्षित अराजकत्व की परिचायक है। उनके रूक्ष हास्य और मार्मिक भाषा का सद्य प्रभाव कुछ तीक्ष्णता लिए रहता है। एक अवज्ञापूर्ण दृष्टि और दो सूत्र वचनो से तुपारपात करने की उनकी शक्ति का परिचय जिनको भी हुआ है वे उन क्षणो के अनुभव को जीवन भर नही भुला सकते।

कहा जाता है कि किसी भी व्यक्ति का सबसे उत्तम परिचय उसकी साधारणतम क्षणो मे की हुई बातचीत है। कृपालानी की जिह्वा मे जिस सरस्वती का निवास है, उसके कारण उनका कोई भी वचन साधारण नही कहा जा सकता। मीमासा, वक्रोक्ति और व्यग का कुछ ऐसा सम्मिश्रण उनके बोलने में रहता है कि सामान्य बातों मे भी लोगो को कटूक्ति की गध मिलती है। उनके ये सब वाह्य आवरण उन गुणो को छिपाये रहते है जिनको पारखियो ने पहिचाना है और जिनके कारण आज वह राष्ट्र के निर्माताओ मे है।

कृपालानी का जन्म सिन्ध के एक भद्र परिवार मे सन् १८८८ मे हुआ। उनके भाइयो मे मे एक सन्यासी हो गया, एक गुप्त राजनीतिक दल मे सम्मिलित हो गया और प्रसिद्ध 'रेशमी रुमाल षडयत्र' में विख्यात हो गया। अपने कार्यो के सिलसिले मे

उसको भारत से वाहर जाना पड़ा और तुर्की मे उसकी मृत्यु हो गई।

कृपालानी जन्मजात विद्रोही है। एक वार जव वह महाविद्यालय मे छात्र थे, एक अध्यापक, डाक्टर जेक्सन ने कहा,—"तुम भारतीय झूठे हो।" इस कथन से कृपालानी के देशाभिमान को वडा धक्का लगा। उन्होने छात्रो को सघटित कर उस अध्यापक को पाठ सिखा दिया। वाद में कृपालानी और उनके साथियो को वह महाविद्यालय छोड़ना पडा।

अपने विद्यार्थी जीवन ही में राजनैतिक चेतना जागरूक रखने के कारण उनपर लोकमान्य तिलक और श्री अरविन्द का वडा प्रभाव पड़ा। अपने प्रगतिशील विचारो के कारण उन्हे कराची के सिंध महाविद्यालय और वम्वई के विल्सन महाविद्यालय से निकाला गया।

कई महाविद्यालयो की मेजे खुरचने के वाद कृपालानी विहार के एक महाविद्यालय मे अध्यापक हो गये। गाधीजी उस समय चम्पारन सत्याग्रह आन्दोलन चला रहे थे। कृपालानी और राजेन्द्र वावू दोनो उस समय गांधीजी के साथ हो लिये। पकड़े जानेवाले सत्याग्रहियो मे सर्व प्रथम रहने का श्रेय कृपालानी को प्राप्त हुआ। तव से आज तक कृपालानी गाधीवादी है। गाधीवादकी व्याख्या करने मे वह अद्वितीय है।

अपने गाधीवादी होने पर कृपालानी को गर्व है। उन्होने गाधीवाद को आलोचनात्मक दृष्टि से देखा और परखा है। एक वार उन्होने कहा कि "मै गाधीवाद का वहुत सतर्क होकर विश्लेपण करता हू। पर फिर सूक्ष्म दृप्टि से देखने पर, मै वापू को सदा सही पाता हू। तव मै और कर ही क्या सकता हू, सिवाय इसके कि उनका अनुगमन करूं? यह मेरा दुर्भाग्य है कि मै अन्यतम प्रतिभाशाली व्यक्ति नही हू। दूसरा उत्तम मार्ग जो मेरे लिए रह गया है वह यह है कि किसी अन्यतम प्रतिभावान व्यक्ति का अनुसरण करू। और यदि ऐसा न करू तो मै दोनो तरफ से डूवा!"

जव सन् १९१८ मे महामना पंडित मदनमोहन मालवीय काग्रेस के

अध्यक्ष निर्वाचित हुए तो कृपालानी उनके सहकारी वने। सन् १६१६में उनको काशी विश्वविद्यालय मे इतिहास का अध्यापक नियुक्त किया गया। पर सत्याग्रह आन्दोलन के शुरु होते ही वह उसमें कूद पडे।

जेल से मुक्त होने पर आचार्य नरेन्द्रदेव, वावू श्रीप्रकाश आदि के साथ कृपालानी ने काशी विद्यापीठ का सघटन किया। उन्होने वहा पैर जमाये ही थे कि गाधीजी ने उन्हे सावरमती मे विद्यापीठ का कार्य सभालनेके लिए वुला भेजा। यही उन्हे आचार्य उपाधि से सम्वोधित किया जाने लगा। प्रातीय काग्रेस के अधिकारियो से विद्यापीठ के शासन के विषय मे उनकी खटपट हुई तो उन्होने अध्यक्ष पद से पद त्याग कर दिया और रचनात्मक कार्य करने के लिए सयुक्तप्रात (उत्तर प्रदेश) चले आये।

यह अधिकतर पूछा जाता है कि क्या कृपालानी मे सगठन करने की क्षमता है? इन व्यक्तियो को गाधी आश्रमो की ओर नजर डालनी पडेगी। इसके विषय मे लिखते हुए राजेन्द्र वावू ने लिखा था, "यह आश्रमो के सग-ठन और उनके कार्य मे ही है कि नवयुवको को अनुप्राणित करने की और उनको रचनात्मक कार्यो मे लगा देने की उनकी महान प्रतिभा ने पहले पहल लोगो का ध्यान अपनी ओर आकर्षित किया।"

कृपालानी अनेक वर्षो तक काग्रेस महासमिति के सदस्य और प्रधान मत्री रहे। वह काम लेने में कडे है। अपने अधीनस्थ लोगो को उन्नति की पूरी सुविधा देते है, परन्तु निठल्ले लोगो के दिल मे आतक पैदा करते है। उन्होने अखिल भारतीय काग्रेस कमेटी के कार्यालय में शायद ही किसी को कभी दडित किया हो। यद्यपि थे वह काग्रेस के प्रधानमत्री, किन्तु कार्यालय के सभी लोग उनसे डरते थे। वे यह जानते थे कि कार्य मे किसी प्रकार की उपेक्षा और असावधानी को कृपालानी कभी सहन न करेगे।

कृपालानी काग्रेस के ५४वे अधिवेशन के अध्यक्ष निर्वाचित हुए। जब उन्होने यह अनुभव किया कि काग्रेस उनकी दृष्टि से गाधीजी के सिद्धातो से दूर होती जा रही है तो उन्होने अध्यक्ष पद त्याग दिया।

उन्होंने किसान मजदूर प्रजा पार्टीकी स्थापना की। सन् १९५१के आम चुनाव के वाद समाजवादी दल का उक्त दल मे विलयन हो गया। कृपालानी नये प्रजा समाजवादी दल के अध्यक्ष चुने गये।

वक्ता कृपालानी और लेखक कृपालानी दोनो ही मे मौलिक विचार और स्फूर्तिमान अभिव्यक्ति परिलक्षित होती है। बुद्धिवादियो की परिधि के अन्दर उनके ग्रथ, 'दि गाधियन वे' (गाधीवादी पथ), 'पोलिटिक्स आफ चर्खा' (चरखे की राजनीति), 'नॉनवायलेट रिवोल्यूशन' (अहिंसक क्राति) गम्भीर अध्ययनकी सामग्री समझे जाते है।

कृपालानी स्वय केवल चुनी हुई पुस्तके पढते है। गीता, वाइविल और सिंध के सूफी कवि शाह अब्दुल लतीफ का वह प्राय. मनन करते रहते है। इससे उनकी उस धार्मिकता का पता चलता है जिसका आजकल की दुनिया मे प्रदर्शन करना उपहासास्पद समझा जाता है। कुछ वर्ष पूर्व उन्होंने कहा था कि अपने वडे भाई की तरह मेरी भी सन्यासी वन जाने की इच्छा होती है। पर वग कन्या सुचिता देवी के साथ उनके विवाह ने उनके जीवन मे नयी धारा ला दी है। धार्मिकता, राजनीति और प्रेम के सगम, उनके व्यक्तित्व मे परस्पर विरोधी प्रवृत्तियो का समागम कर दिया है। इसी कारण उनका अभ्यातर उतना नीरस और रूक्ष नही है जितना कि वाह्य दर्शन से प्रकट होता है। उनकी दृष्टि कठोर है, पर उनका हृदय वहुत मृदुल है। एक घटना उल्लेखनीय है। अगस्त १९४२ के प्रात. काल श्रीमती सुचिता देवी काग्रेस महासमिति की प्रख्यात वैठक मे सम्मिलित होने के लिए स्वराज्य भवन मे सामान वाध रही थी। पर कृपालानी निर्विकार भाव से वरामदे मे इस तरह खडे थे जैसे घर मे कुछ काम ही न हो रहा हो। उन्हे देखकर सुचिता देवी वोली, "आप तो आज वम्वई जाते जैसे नही दीखते।" कृपालानी ने तुरत उत्तर दिया, "सुचिता, हम अवश्य जा रहे है और यह आशा नही है कि लम्वे अर्से तक यहा वापस आ सकेगे। तुम मुझे कुछ क्षण शान्तिपूर्वक उन सुन्दर फूलो को क्यो नही देखने देती

जो सामने बगीचे में खिल रहे है ?" क्या ऐसे व्यक्ति का हृदय कठोर हो सकता है ? उनके बारे मे स्वर्गीय श्रीमती सरोजिनी नायडू ने कहा था, "हास्य व्यग से परिपूर्ण, शक्ति और ओज से भरे हुए, एक तीव्र मेधा के वह ऐसे व्यक्ति है जो हमेशा उत्पीडन करनेवाले तर्ज तरीको और जीवन शून्य परम्पराओ के खिलाफ विद्रोही के रूप मे खडे होते है। वह स्वभाव से जोशीले, अधीर और अग्रगामी है, फिर भी भाई चारे के एक तनिक से प्रदर्शन पर भी वह कितने कृत कृत्य हो जाते है तथा अपने प्रति प्रकट किये गये प्रेम के प्रति अपना आभार प्रदर्शित करते है।"

कृपालानी विश्वासवान व्यक्ति है। यही विश्वास उन्हे सबल देता है। वह अपने विचारो की रक्षा के लिए सदैव कष्ट झेलने को तैयार रहते है। वह आवश्यकता पडने पर अपने उद्देश्यो और आदर्शो के लिए हँसते-हँसते फासी का तख्ता चूम सकते है। ऐसे ही लोग अपने सहयोगियो के हृदयो में सम्मान और साहस पैदा कर सकते है।



विनोबा भावे

कर्मयोगी विनोवा भावे ने देश का ध्यान अपनी ओर खीच लिया है। आसपास के अंधकार मे वह आशा की किरण है। किसान उन्हे अपने मुक्तिदाता के रूप में देखते हैं। जमीदार अपनी इच्छा से उनके अनुरोध को स्वीकार करते है। सरकार उनके भूदान यज्ञ को मान्यता प्रदान करती तथा इसमें अपना सहयोग देती है। प्रतिद्वद्वी राजनीतिक दल इस सद्-कार्य में उनका अनुगमन करते है और श्रद्धा प्रकट करते है। वह स्थान-स्थान की यात्रा करते है। उनके आसपास भारी भीड़ जमा हो जाती है। यह दयालु आत्मा अपनी निस्वार्थता से स्वार्थियो को लज्जित कर देती है। वह यह नही चाहते कि लोग दयावश गरीवो को भूमि दे। उनका तो यह विश्वास है कि हवा और पानी की तरह भूमि भी परमात्मा की नि शुल्क देन है तथा यह प्रत्येक जन को उसकी आवश्यकतानुसार मिलनी चाहिए। उन्होने एक वार कहा था, "हवा और पानी की तरह भूमि परमात्मा की है। यह सोचना मूर्खता है कि यह सदैव एक ही वर्ग के लोगो की सम्पत्ति रहेगी। निःशुल्क भूमि देकर कृतकार्य होइए।"

विनोवा ने अपनी आत्मा को जीत लिया है। वह वाल ब्रह्मचारी है। किसी वस्तु से लोभित नही हो सकते। वह योगीवत् जीवन व्यतीत करते है और अह को पूर्णत. विलोप करने में विश्वास करते है। गरीवो और अमीरो के समान रूप से हितैषी है। वह गांधीजी के सच्चे अनुयायी है और अहिसा की ज्योति को ऐसे समय में प्रज्वलित रखे हुए है जव कि संसार में हिसा की लपटें व्याप्त हो रही है। उनका भूदान यज्ञ एक महान प्रयोग तथा असाधारण आदोलन है। इससे भले ही भूमि समस्या न सुलझ सके, परंतु देश में इस समस्या के सवध में वातावरण की सृष्टि हो गई



विनोवा भावे

है। कुछ दिन पूर्व विनोबा ने इस आदोलन का वर्णन निम्नलिखित अविस्मरणीय शब्दो मे किया था—"यह भूदान यज्ञ जीवन को ही परिवर्तित करने का अहिंसात्मक प्रयोग है। मै केवल सर्वकालीन परमात्मा का निमित्त मात्र हू। मै भी उन्ही के समान निमित्तमात्र हू जो दान देते है या लेते है। यह परमात्मा प्रेरित कार्य है। यदि ऐसा न होता तो लोग जो पग भर जमीन के लिए लडते है, नि शुल्क सैकडो एकड जमीन देने के लिए कैसे प्रेरित हो जाते ?"

विनोबा के बचपन के बारे में बहुत कम ज्ञात है। वह अपने माता-पिता की ज्येष्ठ सतान है। इस विद्वान, योगी, दार्शनिक, कवि और लेखक ने सदैव शुद्ध और सात्त्विक जीवन व्यतीत किया है। उन्होने छोटी अवस्था मे ही अपना घर त्याग दिया। अपने माता-पिता और दादा-दादी मे उन्होंने अनेक गुण विरासत में पाए है। वे बडे धार्मिक और सात्त्विकी थे। उनका विश्वास था कि सभी मानव परमात्मा की सतान है और मानवो मे कोई भेद नही होना चाहिए। उनके मदिर सब के लिये खुले थे। उस समय के लिए यह असाधारण प्रगतिशीलता थी। उनके दादा शम्भूराव मूर्ति के सामने भजन गाने के लिए मुसलमान सगीतज्ञो को आमन्त्रित किया करते थे। विनोबा बचपन से ही समाचार पत्रो को पढने के बड़े शौकीन थे। उनके घर में अच्छा पुस्तकालय था। उन्होने प्रारम्भिक अवस्था में ही धार्मिक साहित्य का गहरा अध्ययन किया। इस साहित्य का उन पर बडा प्रभाव पडा। वह लगभग १८ भाषाये जानते है। एक बार उनकी माता ने उनसे कहा कि मै सस्कृत मे गीता को नही समझ सकती। क्या इसका मराठी में अनुवाद है ? इससे विनोबा को गीता को मराठी मे अनूदित करने की प्रेरणा मिली। इस अनुवाद का मराठी साहित्य में उच्च स्थान है।

मै विनोबा से गया के एक गाव मे अप्रैल, सन् १९५४ मे मिला था। निस्वार्थ सेवको का एक दल उन्हे घेरे हुए था। वे किसी प्रभाव-

शाली सदेश से उत्प्रेरित थे । महान स्वप्नो मे डूबे स्वप्न दृष्टा से मालूम पडते थे । उनका "वावा" मे पूर्ण विश्वास था । उन्हें विनोवा वावा कहते थे । यह वातावरण पूर्णत. गाघीवादी था । इसे देखकर मुझे सेवाग्राम की कुटिया मे गाधीजी से अपनी भेंट का स्मरण हो आया। विनोवा गाधीजी के सच्चे प्रतिरूप दिखाई पडते है।

जव तक मै उनके पास वैठा रहा तव तक मुझ पर उनके महान व्यक्तित्व का प्रेरणाप्रद प्रभाव पडता रहा। मैंने अनुभव किया कि विनोवा में गावीजी के समान ही विनोदप्रियता है। उनकी मुस्कान से अन्य मुखड़ों पर भी मुस्कान फैलती है। जव वह हसते या चुटकियो का आनद लेते है तव उनका मुखडा भोला मालूम पड़ता है। मेरी ओर इशारा करते हुए उन्होंने पूछा, "क्या तुम्हारा नाम हमारे राजर्पि टडनजी से विलकुल मिलता है ?" मैंने कहा—"हां, पर मै विना दाढी वाला हू ।" इस पर वह दिल खोलकर हंसे।

इन दिनो विनोवा काग्रेस और अन्य सघटनो के उच्च कोटि के लोगो को अपनी ओर आकर्पित कर रहे है। उनके भूदान कार्यकर्त्ता और आश्रम हमे गाधीजी के दिनो की काग्रेस की याद दिलाते है। महात्मा के रचनात्मक कार्यकर्त्ताओ ने जनता का विश्वास प्राप्त किया। ब्रिटिश सरकार सदैव यह जानती थी कि भले ही किसी भी आन्दोलन के लिए देश मे उत्साह न हो पर महात्मा की अगुली का इशारा पाते ही यह ठोस और प्रभावशाली गावीवादी सेना मैदान में कूद पड़ेगी और सरकार के लिए समस्या उत्पन्न कर देगी। भूदान कार्यकर्त्ता भी हमे ऐसी ही आशा वंधाते है। हम उन पर और उनके नायक पर भरोसा कर सकते है ।

एक वार एक अमेरिकी ने विनोवा से अपने देश की जनता के लिए सदेश मागा। विनोवा संकोच में पड़ गए। फिर उन्होंने कहा, "अमेरिका जैसे महान देश को सदेश देना मेरी धृष्टता होगी। पर मै यह चाहूगा कि

वे हमारे आन्दोलन को समझें। यह हमे बताता है कि सामाजिक दोषों को कैसे दूर करे।" फिर उन्होंने विनोदपूर्वक कहा कि "एक बार मैंने एक अमेरिकी आगन्तुक से कहा—'यदि तुम्हारे देश ने निःशस्त्रीकरण किया तो इससे वहा बडी बेकारी फैलेगी। फिर भी वे युद्ध पोतो का निर्माण जारी रख सकते हैं, पर उन्हे चाहिए कि उन्हे बडे दिन के अवसर पर नष्ट कर दें'।"

गाधीजी की यह महानता थी कि वह नेताओ को प्रशिक्षित करते थे और मिट्टी से वीरो का निर्माण करते थे। विनोबा की महानता इस बात मे है कि वह विनोबाओ का निर्माण कर रहे हैं जो उनके व्रत में विश्वास करते हैं तथा उनके सदेश को गाव-गाव मे फैलायेंगे। उनकी कल्पना का ग्राम राज स्थापित करने के लिए कार्य करेंगे। उनके कार्य की प्रतिध्वनि छोटे और बडो सभी के दिलो मे समान रूप से हो रही है।

विनोबा को गाधीजी ने खोजा। महात्मा ने अपने शिष्य के महान गुणो को अच्छी तरह अनुभव किया तथा उससे बहुत ही प्रभावित हुए। गाधीजी ने कई वर्ष पहले विनोबा को लिखा था—"मै नही जानता कि तुम्हारे लिए किन विशेषणो का उपयोग करू। तुम्हारे प्रेम और चरित्र की पवित्रता से मै अत्यधिक प्रभावित हू। मै तुम्हारी परीक्षा लेने मे असमर्थ हू।" विनोबा ने गाधीजी के विचारो को तभी स्वीकार किया है जब वह स्वय उन से सतुष्ट हो गए है। बापू अनेक बातो मे उनसे सलाह लेते थे। वह विनोबा को अहिंसा के विषय मे अधिकारी विद्वान मानते थे। वह बड़े धार्मिक हैं तथा गीता, कुरान और बाइबिल के प्रकाण्ड विद्वान है। उनका धार्मिक व्यक्तियो पर—भले ही वे पारसी, पडित या मौलवी हो—स्थायी प्रभाव पडता है।

भारतन कुमारप्पा ने लिखा है, "ऐसा लगता है मानो विनोबा हमारे देश की गहन आध्यात्मिकता और धार्मिक अनुभव के परिपक्व फल

है। इसी से अत्यत भिन्न मतावलम्बी तक उन्हे सम्मानित करते है तथा उनकी वाते सुनते है। उनके साथ रहना तथा उन्हे निकट से समझना शिक्षाप्रद था।"

विनोवा ने वहुत कुछ अपनी माता राखूभाई से सीखा। माता ने उन्हे अनेक भक्तिपूर्ण भजन सिखाये तथा उनके मन में शास्त्रो के प्रति रुचि उत्पन्न की। उनकी मृत्यु के पूर्व सन् १९१८ में विनोवा गाधीजी के साथ हो गए। अपनी प्रारम्भिक अवस्था मे एक दिन उन्होंने अपने सव प्रमाण पत्र चूल्हे मे जला डाले और कहा कि ये सव निरुपयोगी थे। यह देखकर उनकी माता को वड़ा आश्चर्य हुआ पर उन्होने कुछ नही कहा। वह गावीजी के साथ रहने लगे पर इसका उनके माता पिता को पता नही था। जव वापू को इस वात का पता चला तो उन्होंने इसे पसद नही किया। उन्होंने विनोवा के माता-पिता को निम्नलिखित पत्र लिखा—"विनोवा मेरे साथ है। आपके पुत्र ने उसकी अवस्था को देखते हुए चरित्र की असाधारण उज्वलता और साधुता प्राप्त की है। मुझे इनकी उपलब्धि के लिए कई वर्षो तक कठोर आत्मसयम करना पड़ा था।" कहा जाता है कि इस पत्र में गावीजी ने वास्तविक नाम विनायक के स्थान मे विनोवा लिखा था। तभी से सारा ससार उन्हे विनोवा के नाम से जानता है।

यद्यपि विनोवा कई आदोलनो मे भाग ले चुके थे तथा जेल जा चुके थे, पर उनका नाम सन् १९४०मे विख्यात हुआ। विनोवा का वर्णन गाधीजी से अच्छा कौन कर सकता है ? गाधीजी ने जव विनोवा को व्यक्तिगत सत्याग्रह के लिए प्रथम सत्याग्रही चुना तव उन्होंने उनके वारे मे वताया कि "विनोवा कौन है तथा वह सव से पहले क्यो चुने गए ? विनोवा वी० ए० में पढते थे पर उन्होंने सन् १९१५ मे मेरे भारत आने पर कालेज छोड दिया। वह सस्कृत के विद्वान है। उन्होंने आश्रम के आरम्भिक दिनो में ही इसमे प्रवेश किया। वह इसके प्रथम सदस्यो में है। उन्होने संस्कृत का अध्ययन करने के लिए आश्रम से एक वर्ष की छुट्टी ली। एक वर्ष की समाप्ति के

बाद बिना कोई सूचना दिये वह फिर आश्रम मे आगए। मै यह भूल ही गया था कि वह उस दिन आनेवाले है। उन्होने आश्रम की सभी श्रमिक प्रवृत्तियो मे भाग लिया है तथा मैला साफ करने मे लेकर रसोई पकाने तक का काम किया है। यद्यपि उनकी स्मरण शक्ति आश्चर्यजनक है तथा वह स्वभावत विद्यार्थी है फिर भी वह अपना अधिकाश समय सूत कातने मे लगाते है तथा इस कार्य मे उन्होने विशेषज्ञता प्राप्त करली है। उनका विश्वास है कि सर्वत्र सूत कातने को प्राथमिकता दी जानी चाहिए। इससे गावो की निर्धनता दूर होगी। वह जन्म जात शिक्षक है तथा उन्होने आशा-देवी की हस्तकला के माध्यम से शिक्षा प्रणाली का विकास करने के कार्य में बडी सहायता की है। विनोबा ने सूत कताई को हस्तकला का आधार मानकर एक पाठ्य पुस्तक लिखी है। यह मौलिक चीज है। उन्होने मजाक उडानेवालो को अनुभव करा दिया है कि कताई श्रेष्ठ हस्तकला है जिसका बुनियादी शिक्षा के लिए प्रभावशाली उपयोग किया जा सकता है। उन्होने तकली की कताई में आमूल परिवर्त्तन कर दिया है तथा उसकी अभी तक अज्ञात सम्भावनाओ को प्रकट कर दिया है। ठीक कताई करने मे भारत मे कदाचित वह अद्वितीय है। उन्होने अपने हृदय मे अस्पृश्यता का सर्वथा निराकरण कर दिया है। वह साम्प्रदायिक एकता मे मेरे समान ही विश्वास करते है। इस्लाम के तत्त्व को समझने के लिए उन्होने कुरान के मूलरूप का अध्ययन करने मे एक वर्ष लगाया। इसके लिए उन्हे अरबी पढनी पडी। उन्होने अपने पडोस के मुसलमानो से जीवत सम्पर्क बनाने के लिए यह अध्ययन आवश्यक समझा।

"उनके पास अपने शिष्यो और कार्यकर्त्ताओ की टोली है जो उनका निर्देश पाते ही कोई भी त्याग करने के लिए उठ खडी होगी।

"वह भारत की राजनीतिक स्वतंत्रता की आवश्यकता मे विश्वास करते है। वह इतिहास को सही-सही समझते है। पर उनका विश्वास है कि खादी पर केन्द्रित रचनात्मक कार्यक्रम के बिना गावो की वास्तविक स्वत-

ग्रता सभव नही है। उनका विश्वास है कि चर्खा अहिंसा का उपयुक्त वाह्य चिह्न है । अहिंसा पिछले सत्याग्रह आदोलनो का सक्रिय अग हो गई है। वह राजनीतिक मच पर कभी नही चमके। अपने अनेक सहकर्मियो के साथ वह विश्वास करते है कि सविनय भद्र अवज्ञा आदोलन की पृष्ठभूमि मे मूक रचनात्मक कार्य अति भीड-भाड़ से भरे राजनीतिक मच से कार्य करने की अपेक्षा अधिक प्रभावशाली है। उनका पूर्ण विश्वास है कि रचनात्मक कार्य मे हृदय से दृढ विश्वास किये विना अहिंसात्मक प्रतिरोध असम्भव है। विनोवा कट्टर युद्ध-विरोधी है।"

विनोवा गांधीजी के नैतिक उत्तराधिकारी है। तेलगाना मे उनकी सफलता इतिहास के पन्नो की शोभा वढायेगी। वह एक व्रत की पूर्ति के लिए कृत सकल्प है। हमे आशा है कि परमात्मा उन्हे आवश्यक शक्ति प्रदान करेगा। अपने उद्देश्यो के प्रति उनकी लगन और सत्यनिष्ठा से संतो को भी ईर्षा हो सकती है। वह प्रभावशाली वक्ता है और अपनी किसी वात को शायद ही दुहराते है। समस्याओ के प्रति उनका दृष्टिकोण चेतना प्रद होता है। गाधीजी का यह अद्वितीय और साधक शिष्य सदैव उच्च नैतिक स्तर पर रहता है। गाधीवादी लगोटी और टालस्टाय जैसी दाढीवाला यह योगी भूमिहीनो के लिए भूमि की खोज मे जगह-जगह जा रहा है। उनका व्रत सफल और परमात्मा की इच्छा पूरी हो!





कस्तूरबा गांधी

कस्तूरबा गांधी

वह निरक्षर थी। बाल विवाह की शिकार थी। कट्टरपथी परिवार की थीं। अपनी आरम्भिक अवस्था मे उन्हे कदाचित ही इस बात का आभास हो कि वह ऐसे व्यक्ति की पत्नी है जो ससार का एक महानतम व्यक्ति और नायक होगा, जिसकी करोडो जनता प्रेम-पूर्वक आज्ञा पालन करेगी। जो कुछ भी उन्हे अपना थोडा प्रकाश प्राप्त था वह अपने पति के प्रकाश मे लोप हो गया। यद्यपि उन्हे बडी सीमाओ के अतर्गत काम करना पडा और बहुत सी मनुहारो का दमन करना पडा, फिर भी उनका जीवन विश्वास और तप की कहानी था। उन्होने अपने को गाधीजी को समर्पित कर दिया था। पर एक तरह से उन्हे गाधीजी को खोना पडा। गाधी जी करोडो जनता के नायक हो गए। यह जनता उन्हे उनके पुत्रों, पत्नी या सबधियो के समान ही अपना मानती थी। वह अपने प्रशसक देशवासियो के "बापू" बन गए। उन्होने भी इनमें तथा अपने सम्बन्धियो में कोई भेद नही किया। कस्तूरबा के जीवन मे उनका सबसे बडा प्रतिद्वद्वी गाधीजी का जीवन-व्रत था। उन्हे इनके सामने झुकना पडा और उन्होने गाधीजी के जीवन व्रत को अपना जीवन व्रत बना लिया।

उनके आदर्शो की पूर्ति को ही कस्तूरबा ने अपना कार्य बना लिया। अपनी सीमाओ के बावजूद उन्होने गाधीजी के व्यक्तित्व के निर्माण मे बहुत बडा योगदान किया। गाधीजी पश्चिमी देशो की जनता के लिए रहस्यमय पुरुप थे पर अपनी जनता के लिए कार्यशील पुरुप थे। यह जनता उनकी ओर शक्ति, प्रेरणा और नेतृत्व के लिए ताकती थी। अपने जीवन मे कस्तूरबा के महत्त्व के विपय मे गाधीजी

ने लिखा था—"उनमे एक गुण वडी मात्रा मे था जो कुछ न कुछ रूप मे अधिकांश हिन्दू पत्नियो में रहता है। वह गुण था—इच्छा या अनिच्छा से, जान या अनजान मे वह मेरे पद-चिह्नो पर चलने मे अपने को धन्य मानती थी। वह दृढ इच्छा शक्तिवाली महिला थी जिसे मैं आरम्भ मे भूल से ढीठता समझता था। पर उस दृढ इच्छा शक्ति ने उन्हे अनजान में ही अहिंसात्मक असहयोग की कला और प्रयोग मे मेरा गुरु वना दिया।"

महापुरुष की सच्ची पत्नी होना सरल कार्य नही है, विशेपत. ऐसे पुरुप की जो कष्टो को आत्म-शुद्धि का सावन समझे और जीवन की सुखद तथा अच्छी वस्तुओ का त्याग करे। कस्तूरवा सच्चे अर्थो में साध्वी पत्नी थी। उन्हे अपने महान पति के अनुरूप अपने जीवन को वनाने मे वहुत कष्ट भी झेलने पडे। अपने वैवाहिक जीवन के आरम्भिक दिनो में उनमें अनेक सघर्ष हो जाते थे जिनसे दुखद परिस्थितिया पैदा हो जाती थी। गाधीजी ने अपनी आत्मकथा मे इनका उल्लेख किया है। धीरे धीरे दोनो ने एक दूसरे को समझा और सच्चे साथियो की तरह रहने लगे। कस्तूरवा और गाधी का जन्म पोरवंदर में सन् १८६९ मे हुआ था। यह दुखकी वात है कि कस्तूरवा की सही जन्म तिथि अज्ञात है। पर उनके भाई श्री माधवदास के कथनानुसार उनका जन्म सन् १८६९ मे हुआ था तथा वह गाधीजी से तीन या चार महीने छोटी थी। उनका विवाह तेरह वर्षकी अल्प अवस्था मे हो गया था। अपने विवाह के सवध में गाधीजी ने अपनी आत्म-कथा में लिखा है—"मेरे लिए तो विवाह का अर्थ इससे भिन्न नही था कि अच्छे कपडे पहिनने को मिलेंगे, वाजे वजेंगे, वरात निकलेगी, खूव दावतें होगी और एक अपरिचित लड़की के साथ खेलने को मिलेगा। उस दिन मुझे सव कुछ ठीक, उचित और आनदप्रद मालूम पडता था। विवाहित होने के लिए मेरी उत्सुकता भी थी।"

कस्तूरवा ने अपने पति के प्यारे और अपने उद्देश्यो के लिए

पति के साथ कष्ट उठाये। वह इसके लिए कोई भी त्याग करने को तैयार रहती थी। अपने पति के द्वारा समय-समय पर उठाए गए असाधारण कदमो की राह मे वह रोडा नही बनना चाहती थी। सन् १९४२ मे गाधीजी की गिरफ्तारी के बाद उन्होने घोषित किया कि मै शिवाजी पार्क मे होनेवाली उस सभा में भाषण करूगी जिस में गाधीजी भाषण करनेवाले थे। ९ अगस्त को पुलिस अधिकारी बिडला भवन मे आ पहुचे और उन्होने पूछा कि क्या आप सभा मे भाषण करेंगी। कस्तूरबा ने कहा—"हा"। इस पर वह तुरत गिरफ्तार कर ली गई। वह पूना के आगाखा महल मे ले जाई गईं जहा गाधीजी नजरबद थे। उस शान्त और मनहूस जगह मे शाति पूर्वक महीने गुजरते गए। इस वातावरण का उनके स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव पडने लगा और अत मे उनका निर्बल शरीर जवाब देने लगा। शिवरात्रि को उन्होने हम सबसे सदैव के लिए विदा ली। उन दुखान्त परिस्थितियो मे अपनी माता की मृत्यु पर श्री देवदास गाधी ने एक वक्तव्य मे कहा, "शाही साज सामान और वातावरण उनकी प्रकृति के प्रतिकूल थे। कटीली तार-बदी और सतरियो के पहरे ने रही सही कमी को भी पूरा कर दिया। जब मै जनता को यह बताता हू कि वह "सेवा ग्राम की नीचे छप्पर की झोपडियो मे जाने के लिए लालायित थी तो मै अपनी प्रिय माता की स्मृति को कोई धक्का नही पहुचाना चाहता।" अनिश्चित काल के लिए नजरबदी ने भी उनपर बडा प्रतिकूल प्रभाव डाला तथा वहा के सभी बाह्य आराम उन्हे मानसिक और आध्यात्मिक शाति नही दे सके।

हम गाधीजी के आश्रमो के बारे में बहुत सुनते है पर उनमे कस्तूरबा के काम और प्रभाव के बारे मे बहुत कम जानते है। दक्षिण अफ्रीका से सन् १९१५ मे लौटने के बाद गाधीजी ने अहमदाबाद मे सत्याग्रह आश्रम स्थापित किया। कस्तूरबा तुरत उसकी सदस्या तथा कार्य सचालिका बन गईं। श्रीमती सरोजिनी नायडू भी इस आश्रम की सदस्या थीं।

उन्होने अपनी विशिष्ट शैली मे कस्तूरवा के वारे मे लिखा—"वह विजय की घडियो मे अपने पति के वाजू मे उसी तरह सरल, शात और सौम्य वैठी जिस तरह परीक्षा तथा दुख की घडियो मे शान्त और निर्भय रहती थी। मुझे उनके उस रूप का भी आभास मिलता है जब विदेशी भूमि में वह अपने नाजुक और पीड़ित एक हाथ से देश के सम्मान का दीप पकडे थी तथा दूसरे हाथ से घायल सैनिको के लिए मोटे कपडे तैयार करती थी। दक्षिण अफ्रीका का महान् नेता जिसने श्री गोखले के शव्दो में मिट्टी से वीर तैयार किए, कुछ अस्वस्थ और थकित भूमि पर आराम से वैठा हुआ फलो और फलियो का साधारण भोजन कर रहा था और उसकी पत्नी इस तरह कार्यमग्न और सतुष्ट दिखाई पडती थी मानो वह विश्व विख्यात नायिका नही, जिसने अपने राष्ट्र के लिए हजारो कष्ट भोगे है, वल्कि सामान्य गृहणी है जो गृहकार्य की सैकडो छोटी-मोटी वातो में व्यस्त है।"

कस्तूरवा के सेवाग्राम मे कार्य का वर्णन करते हुए श्रीमती इला सेन ने लिखा है,—"उनके वारे मे वहुत कम सुनने मे आता है, उनके वारे में वहुत कम लिखा जाता है, पर सेवाग्राम का जीवन उन्ही से आवृत्त तथा उन्ही के त्याग, अपरिमित धैर्य और सूझ-बूझ से प्रभावित है। वह महान् महिला है जिनमे भारत की सव से मूल्यवान् निधिया मूर्त-रूप है। राष्ट्र को उनकी देन उनके पति से कम नही है क्योकि वह उस सव मे उनकी मूक भागीदार रही है।"

कस्तूरवा ने अनेक सभाओ में भाषण नही किये। उन्होने अधिक नही लिखा। कदाचित वह लिख भी नही सकती थी। पर उन्होने जो कुछ भी लिखा वह स्मरण रहेगा। मार्च सन् १९३२ मे गांधीजी की गिरफ्तारी के वाद उनका वक्तव्य राष्ट्र के लिए आह्वान था। यह लम्वा वक्तव्य था। इसमे उन्हो ने कहा था, "इलाज हमारे ही हाथ में है। यदि हम गिरे तो दोष हमारा ही होगा। अतएव मै उन सव नर-नारियो से जिनके मन मे मेरे तथा मेरे पति के प्रति आस्था है, अनुरोध करती हू कि

वे मनोयोग-पूर्वक रचनात्मक कार्य-क्रम मे जुटे तथा उसे सफल वनायें ।"

उनके पुत्र हीरालाल ने धर्म परिवर्त्तन कर लिया था। उन्होने उसे जो पत्र लिखा उससे उनकी वेदना प्रकट होती है । यह उल्लेखनीय पत्र है । इसका कुछ अश यहा दिया जाता है । उन्होने लिखा, "मै नही जानती कि तुमने अपना प्राचीन धर्म क्यो वदला । यह तुम्हारी मर्जी की वात है । पर मैने सुना है कि तुम भोले और अज्ञानी लोगो से अपना अनुगमन करने के लिए कहते फिरते हो । तुम अपनी सीमायें क्यो नही मानते ? तुम धर्म के वारे में क्या जानते हो ? तुम अपनी मनोदशा में क्या निर्णय कर सकते हो ? लोग इस वात से गुमराह हो सकते है कि तुम अपने पिता की सतान हो । तुम धर्म प्रचार करने योग्य नही हो । मै कहती हूं कि तुम ठहरो, विचार करो और अपनी मूर्खता से विमुख होओ । मुझे तुम्हारा धर्म परिवर्तन पसद नही । पर जव मैने तुम्हारा वक्तव्य पढा कि तुम अपना सुधार करना चाहते हो तो मुझे तुम्हारे धर्म परिवर्तन से भी मन ही मन इस आशा से खुशी हुई कि तुम सात्त्विक जीवन आरम्भ करोगे । ."

हीरालाल के उन मुसलमान मित्रो के लिए जो उनके पुत्र की प्रवृत्तियो से अनुचित लाभ उठा रहे थे, लिखित पत्र में तीव्र प्रताडना थी । उन्होने उन्हे लिखा, "मेरे पुत्र के तथाकथित धर्म परिवर्त्तन से उसका उद्धार होने के वजाय मै देखती हू कि इससे स्थिति और भी विगड गई है । कुछ लोग तो उसे 'मौलवी' का पद देने की सीमा तक चले गये है । क्या यह उचित है ? क्या तुम्हारा धर्म मेरे लडके जैसे लोगो को 'मौलवी' कहलाने की अनुमति देता है..... .. पर एक दुखी मा की यह निर्वल पुकार कदाचित् उनकी अतरात्मा को द्रवित करे जो तुम्हे प्रभावित कर सकते है । मै तुमसे यह कहना अपना कर्त्तव्य समझती हू जैसा मै अपने पुत्र से कह रही हू कि तुम परमात्मा की नजरो मे ठीक काम नही कर रहे हो ।"

कस्तूरवा का देहात हो गया। उनका भौतिक शरीर वर्षो का भार सभाल न सका और वह हमसे विदा हो गई। जिन परिस्थितियो मे उनका देहात हुआ उससे हमे अत्यत दुख हुआ। वह सेवाग्राम की कुटिया मे वापस जाने के लिए लालायित थी। अपने गिरते हुए स्वास्थ्य के वावजूद वह नजरवदी से मुक्त नही की गई। वह मानवी आधारपर भी मुक्त नही की गई। वह नज़रवद शिविर मे चल वसी। भारत सरकार के अमेरिका स्थित एलची ने अमेरिका की जनता को प्रवुद्ध करने की उत्कट प्रेरणावश यह आश्चर्यजनक वक्तव्य दिया कि "भारत सरकार ने कस्तूरवा को रिहा करने का प्रस्ताव रखा था, पर यह प्रस्ताव स्वीकृत नही हुआ।" श्री देवदास गांधी ने इसका जोरदार खडन किया और इस पर आश्चर्य प्रकट किया।

कस्तूरवा का जिन परिस्थितियो मे निधन हुआ उसे भूलना हमारे लिए सभव नही है। जव राजनीतिक सघर्ष की धूल वैठ गई होगी तव ब्रिटिश जनता का सिर शर्म से जरूर झुक गया होगा कि उनके लोगो ने भारत की सव से सम्माननीय वृद्ध महिला के साथ, जो ससार के एक महा-पुरुष की पत्नी थी, कैसा व्यवहार किया। इस विचार से वड़ा दुख होता है कि जो प्राणी किसी को किसी प्रकार भी नुकसान नही पहुचा सकता था उसे सवसे शक्तिशाली साम्राज्य के वंदी के रूप मे जीवन से हाथ वोना पड़ा। जव तक कस्तूरवा का नाम स्मरण रहेगा तव तक ब्रिटेन के इस अधम कार्य को भुलाया नही जा सकता।

कस्तूरवा के निस्वार्थ कार्य, उज्ज्वल विश्वास तथा अमर साहस ने ससार के नारीत्व पथ को आलोकित किया है। यशोधरा के समान कस्तूरवा अपने पति की इच्छाओ के प्रति सम्मान करना जानती थी। उनकी उनके प्रति साधना अपने आप एक गौरव गाथा है। उनके निर्वल शरीर में दृढ इच्छा-शक्ति छिपी हुई थी। उन्हे ऐसे गत्यात्मक व्यक्तित्व की सेवा करने का गौरव प्राप्त था जिसने सत्य के प्रयोग किये। कस्तूरवा

भारतीय नारीत्व का सजीव प्रतीक तथा श्रेष्ठ आभूषण थीं। उनकी स्मृति हमारे हृदय-पटल पर अंकित है तथा वह हमें सदैव प्रेरित करेगी। वह श्रीमती नाइडू के शब्दों में मर्त्य से अमरत्व को प्राप्त हो गई हैं तथा उन्होंने भारत की प्रेय, गेय और ऐतिहासिक महिला-मंडली में उपयुक्त स्थान ग्रहण कर लिया है।



जयप्रकाश नारायण

वह अपने डिब्बे के एक कोने मे शात बैठे हुए थे। वह हाल ही जेल से रिहा किये गये थे और लाहौर फोर्ट की दुखद स्मृतिया उनके मस्तिष्क मे उक्त समय भी विद्यमान थी। उन्होने ब्रिटिश शासन को समाप्त करने के लिए वीरता-पूर्ण सघर्ष किया। अनेक कष्ट झेले पर ब्रिटिश राज्य ज्यो का त्यों बना रहा। ऐसा जान पडता था कि वह गम्भीर मुद्रा में हैं और उनके चेहरे पर परेशानिया हैं। मैंने धीरे से उनसे कहा कि आप नेपाल, हज़ारीबाग जेल तथा अन्यत्र स्थानो पर किये गये अपने साहस-पूर्ण कार्यो के सम्बन्ध मे कुछ प्रकाश डालें। मै यह जानने के लिए उत्सुक था कि सन् १९४२ मे दीपावली के दिन वह किस प्रकार जेल से निकल भागे और गिरफ्तारी की हालत में नेपाल से बाहर चले गये? लाहौर फोर्ट मे उन्हे कष्ट दिये गये। वह कहानी अभी अज्ञात थी। मैं उनके डिब्बे मे चढ़ गया और रेलगाडी चल दी। मद मुस्कान के साथ उन्होने कहा, "आप उन दिनो का स्मरण दिलाने के लिए क्यो उत्सुक हैं? जो कुछ भी था वह खत्म हो गया और हमें उन बीती हुई बातो को भूल जाना चाहिये। हमे केवल इसी बात की चिन्ता है कि हम अब भी गुलाम हैं।" मैंने इस बात के लिए आग्रह किया कि वह उन घटनाओ के सम्बन्ध में विस्तार के साथ प्रकाश डाले। भारतीय स्वाधीनता सग्राम में उनका एक महत्वपूर्ण स्थान है। आपने सभी बातो का विस्तार के साथ वर्णन सुनाया और मैंने उसका विवरण अखबार में प्रकाशनार्थ भेज दिया। श्री जयप्रकाश से बातचीत करने मे पहले कभी भी उतना आनन्द नही आया था जितना कि इस समय आया।

जयप्रकाश ही ऐसा साहसी, उत्साही व्यक्ति दीपावली के दिन जब



जयप्रकाश नारायण

कि अनेक मिट्टी के दीप प्रकाशमान थे, उस साम्राज्यशाही कठघरे—हजारीबाग जेल—से भागने में समर्थ हो सकता था। उस दिन अंधेरी रात थी। तारे आकाश मे चमक रहे थे। उस रात के शान्तिपूर्ण वातावरण मे जयप्रकाश, जोगेन्द्र शुक्ल, रामानन्दन मिश्र, सूरजनारायणसिंह, गुलावचन्द्र गुप्त तथा शालिग्रामसिंह भारतीय स्वतन्त्रता के युद्ध मे हिस्सा लेने, मुसीवते झेलने एव स्वतंत्र होने के ध्येय से जेल मे निकल भागे।

जयप्रकाश अव भी युवक मालूम पडते है। आप में युवको के समान उत्साह और वृद्धो के समान धैर्य है। आप जल्द ही घवडाते नही है। वहुत ही विनम्र स्वभाव के है। भूलो पर आप पश्चाताप नही करते। मित्रो एव सहयोगियो के प्रति अधिक उदार है।

हजारीवाग जेल से भागने के पश्चात् जहा कही भी आप गये, आपने विद्रोहाग्नि भडका दी। अपने सहयोगियो के सम्वन्ध मे आप हमेशा पूछ-ताछ करते थे। आपने फरार देश भक्तो को सव प्रकार की सुलभ सहायता पहुचाने का प्रयत्न किया। जयप्रकाश एक विद्रोही की भाति इधर-उधर घूमा करते थे। उन दिनो आपके सम्वन्ध मे अनेक कथाए प्रचलित थी। आपके सम्वन्ध मे विरहा एव आल्हा भी लिखे गये। इनमे आपके कार्यो का वर्णन किया गया है। यदि गाधीजी "भारत छोडो" आन्दोलन के नेता थे तो जयप्रकाश एक वास्तविक विद्रोही थे।

जयप्रकाश नारायण सिद्धातो में विश्वास करते है, परन्तु आप किसी भी सिद्धात के कट्टर हामी नही है। आप दूसरे के विचारो को भी ध्यान से सुनते है। आपने जीवन का पर्याप्त अनुभव किया है, केवल सिद्धातवादी ही नही। आप वातो को अच्छी तरह से परखते एव तोलते है। किसानो और मजदूरो की समस्याओ मे गहरी रुचि रखते है। समता के अधिकार पर निर्मित समाज रचना के पक्षपाती है तथा ऐसी समाज रचना अपने जीवन-काल मे स्थापित होते देखना चाहते है।

जयप्रकाश का जन्म विहार जिले के सितावदिया गाव मे ११

अक्तूबर सन् १६०२ मे हुआ। आप अल्पावस्था मे ही भारत को छोड़ कर अमेरिका चले गये। आपने अमेरिका मे शिक्षा प्राप्त की। वहा करीब ८ वर्ष तक रहे। आपने पाच विभिन्न विश्वविद्यालयो मे अध्ययन कार्य किया। शिक्षा प्राप्त करने के समय जीविकोपार्जन के लिए आपने होटल कर्मचारी, वस्तुओ को बाधने वाले, मज़दूर, विक्रेता तथा यत्रकार (मेकेनिक) के रूप में काम किया। जयप्रकाश पहले गणित, भौतिक-शास्त्र एव रसायन शास्त्र के छात्र थे, परन्तु बाद मे आपने कई वर्षो तक जीव विज्ञान, मनोविज्ञान, अर्थ शास्त्र तथा समाज शास्त्र का अध्ययन किया। अमेरिका मे भी आपने कुछ स्थानो पर ऐसे लोगो को देखा जो बहुत ही गरीबी से अपना जीवन निर्वाह कर रहे हैं। इस विषमता को देख कर आपने यह अनुभव किया कि ऐसा कोई कारण नही कि कुछ को पर्याप्त मात्रा मे चीजे उपलब्ध हो और किसी को मिले ही नही। आप सन् १६२६ मे भारत आ गये। जयप्रकाश आराम का जीवन व्यतीत करने के लिए भारत नही लौटे, वरन् अपने साथियो की सेवा करने तथा कष्टो का जीवन व्यतीत करने के लिए आए। यहा भारतीय राष्ट्रीय काग्रेस के श्रम अनुसधान विभाग के अध्यक्ष बनाये गये। सन् १६३२ मे सविनय अवज्ञा आन्दोलन के समय आप कांग्रेस के महा मत्री भी रहे।

नासिक जेल से जयप्रकाश के जीवन मे एक नये अध्याय का सूत्रपात है। वहा आपने अपने समाजवादी साथियो से काग्रेस समाजवादी दल की योजना पर विचार विमर्श किया। काग्रेस की निर्बलताओ के प्रति वह बहुत ही चिंतित थे। उन्होने अनुभव किया कि सगठन को नयी नीति अपनानी चाहिये। नासिक जेल से रिहा किये जाने के बाद पटना मे आचार्य नरेन्द्रदेव की अध्यक्षता में अखिल भारतीय समाजवादी दल का प्रथम अधिवेशन हुआ। इसके पूर्व आपने सभी प्रदेशो मे भ्रमण कर सभी प्रगतिशील विचार धारा वाले लोगो को काग्रेस समाजवादी दल मे सम्मिलित होने के लिए आह्वान किया। काग्रेस

से मतभेद होने के कारण आपने उक्त सगठन से इस्तीफा दे दिया।

विलयन वार्त्ता के दौरान जयप्रकाश ने एक पक्के राजनीतिज्ञ का कार्य किया। आपने यह अनुभव किया कि राजनीतिक दलो को गलत रास्ते पर नही रहना चाहिये। उन दलो को ऐसे सगठनो मे सम्मिलित हो जाना चाहिये जिनके उद्देश्यो से वे पर्याप्त सहमत है। पचमढी मे यह निश्चित किया गया कि समाजवादी दल को किसान मजदूर प्रजा पार्टी से विलय के सम्बन्ध मे वार्त्ता प्रारम्भ करनी चाहिये। उक्त प्रयास सफल हुआ और नये दल की सयुक्त शक्ति काग्रेस के लिए एक कडी चेतावनी है। प्रजा समाजवादी दल के उच्च नेतृमडल में ऐसे राजनीतिक एव प्रसिद्ध देश भक्त है जिन्होने इस देश मे स्वतन्त्रता का बीज वपन किया है।

लेखक के रूप मे जयप्रकाश की लेखनी मे शक्ति है। आपकी भाषा सरल, सीधी और प्रभावशाली है। आप योग्यता के साथ अपने कथन को प्रस्तुत करते है तथा अपने पाठको को समझाने की चेष्टा करते है। वह प्रसिद्ध वक्ता नही है पर सरल और परिचित शैली मे इस तरह भाषण करते है मानो श्रोताओ से कमरे में बैठे मित्रो के समान बात चीत कर रहे हो। उनका मृदुल स्वर, नपे तुले तर्क, विषय पर अधिकार उन्हें अच्छा वक्ता बना देता है। उनका व्यक्तित्व मत्र अनुरूप तथा प्रभावशाली है। वह अपने श्रोताओ मे भावावेश नही उभाडते। वह तो उन्हे समझाने का यत्न करते है। उनके भाषण मे तडक भडक और रगीनिया नही होती। वह अपने श्रोताओ को अपनी ईमानदारी से प्रभावित करते है।

जयप्रकाश अत्यत मानवीय विचारधारा वाले व्यक्ति है। उनकी पत्नी प्रभादेवी उनके लिए एक निधि के समान है। वह उनके लिए बहुत ही विचारशील एव नम्र स्वभाव वाली है। वह आपके स्वास्थ्य के प्रति काफी सावधानी रखती है और आप के साथ उन स्थानो की भी यात्रा करती है जिनमें उनकी अपनी कोई रुचि नही है। यह सभी जानते

है कि प्रभादेवी जयप्रकाश के लिए कितनी सहायक है, पर यह वहुत ही कम लोगो को मालूम है कि जयप्रकाश प्रभादेवी की कितनी विचार-पूर्ण और कृपा-पूर्ण देख-रेख रखते हैं !

अक्सर देखा गया है कि जयप्रकाश मे समय की नियमितता नही है। हमारे राष्ट्रीय नेताओ में यह सामान्य दोप है। यदि वह वौद्धिक वार्त्ता या भाषण करने में लग जाते है तो दूसरे कार्य-क्रम को भूल जाते है। पर जव वह दूसरे कार्य-क्रम मे विलम्व से पहुचते है तो अपने को अपराधी सा अनुभव करते है। एक दिन इलाहावाद मे वह एक सार्वजनिक सभा में भाषण करने के लिए देर से पहुचे। उन्होने अपने साथियो से कहा, "आप मेरा कार्य-क्रम इतना व्यस्त क्यो रखते है ? आखिर मै भी मानव हूं। जव मै किसी सभा मे देरी से पहुचता हू तो मुझे दुख होता है। यहा मेरी प्रतिष्ठा तुम्हारे हाथों मे है।"

जयप्रकाश राजनीतिक दलो की कुछ परम्पराओ को अगीकृत नही करना चाहते। एक मार्क्सवादी अथवा एक वामपक्षीय को माला पहनाने, अभिनन्दन-पत्र तथा थैली भेंट करने आदि के प्रति यदि घृणा नही होती तो विमुखता अवश्य रहती है। इस प्रकार की चीजे कुछ वर्ष पूर्व आदर की प्रतीक जरूर थी, परन्तु इन दिनो वे चापलूसी में शामिल है। अधिकतर मालाये तथा थैलिया इसलिये भेट की जाती है कि उनसे आर्थिक स्वार्थ सावन किया जाय। मै इस वात से अत्यधिक प्रभावित हुआ जव कि जयप्रकाश ने थैली भेट करने के एक प्रस्ताव को अस्वीकृत कर दिया। उक्त आशय का प्रस्ताव उनकी ५०वी जन्म-तिथि पर पेश किया गया था। आपने कहा कि "मै सदैव दल का काम करता हूं और भविष्य मे भी वही करता रहूगा। मै यह नही चाहता कि इन परम्पराओ का, जो कही और प्रचलित है, हमारे दल द्वारा पालन किया जाय।"

यदि जयप्रकाश को नज़दीक से देखें तो आपको यह नही मालूम होगा कि वह जन्म से ही क्रातिकारी है। कहा जाता है कि लाहौर फोर्ट के

खुफिया विभाग के उच्च अफसरो को इस बात का अक्सर आश्चर्य होता था कि यह शातिपूर्ण व्यक्ति सकटपूर्ण स्थितियो मे क्रातिकारियो का नेता था। जो लोग जयप्रकाश के भाषण को सुनेगे उन्हें इस बात की कल्पना भी नही होगी कि वह छापामार युद्ध एव क्रातिकारी आन्दोलन का सगठन कर सकते है। वह मोहक व्यक्ति है जो मैत्रीपूर्ण व्यवहार और मुस्कान से आपका समर्थन प्राप्त कर लेगे। परन्तु यदाकदा क्राति-कारी की भृकुटि टेढी हो जाती है जिससे बहुत से लोग भयभीत हो जाते है। जयप्रकाश का आदर एव सम्मान न केवल उनके दल के कार्यकर्त्ता ही करते है, वरन् वे लोग भी करते है जिनका उनसे मतभेद है। मुझे अच्छी तरह मालूम है कि नेहरूजी के बार बार प्रयत्न करने के बावजूद जब जयप्रकाश ने काग्रेस छोडने का निश्चय किया तो नेहरुजी कितने दुखित हुए थे।

जयप्रकाश के विरुद्ध कम्यूनिस्ट काफी प्रचार कर रहे है तथा उन्हे अमेरिका समर्थक कहते है। पर जयप्रकाश ऐसे देशभक्त तथा भद्र पुरुष है जो अपनी आत्मा और अपने देश को बडे से बडे राष्ट्र या व्यक्ति के हाथो कदापि नही बेच सकते। वह अमेरिका विरोधी या रूस विरोधी भी नही है। वह भारत को किसी भी राष्ट्र का पिछलग्गू बनने देना नही चाहते। वह चाहते है कि ससार के राष्ट्रो मे भारत को ऊचा स्थान प्राप्त हो। वह सत्ता या पद के भूखे नही है तथा अपने सिद्धातो से कभी डिग नही सकते। हम जानते है कि उन्होने कई बार सरकारी पद ग्रहण करने से इन्कार कर दिया क्योकि वह सरकार की नीतियो से सहमत नही थे। उनसे कम दृढ व्यक्ति ने अपनी अतरात्मा को सकुचित कर ऐसी स्थिति से लाभ उठा लिया होता। जयप्रकाश भारतीय राजनीतिक क्षितिज के जगमगाते सितारे है। भावी राष्ट्रनायक के रूप मे राष्ट्र की दृष्टि उनकी ओर लगी रहती है।

२४९

कमला नेहरू

.महापुरुषो की पत्नियो की अधिकतर अपने गृह मे एक तरह की उपेक्षा रही है तथा बाहर उनके पतियो के प्रभावशाली व्यक्तित्वो के कारण उन्हे उचित सम्मान प्राप्त नही हुआ है। इन अज्ञात वीरागनाओ के बारे मे बहुत कम ज्ञात है जिन्होने अपने पतियो की महानता में बहुत कुछ योगदान किया है। कमला नेहरू का जवाहरलाल की पत्नी के रूप में अपने देशवासियो के हृदयो मे सदैव स्थान रहा। परन्तु अपंने ही विशुद्ध गुणो के कारण उन्हे अपना यथायोग्य स्थान नही मिला। उन्होने कभी भी अपने पति की प्रसिद्धि के प्रकाश मे प्रकाशित नही होना चाहा। वह अपने ही प्रकाश से प्रकाशित थी। अपने पति की अंध प्रशसक नही थी। उनका उनके प्रति आलोचनात्मक रुख था। वह जवाहरलाल की सफलताओ को न तो अतिरजित करती थी और न उनका मूल्य ह्रास ही करती थी। उनमे आत्मश्लाघा थी तथा वह केवल पुछल्ला नहीं बनना चाहती थी। जवाहरलाल ने लिखा है, "असाधारण आत्म गौरव और वेदना शीलता के कारण वह मेरे निकट सहायता मागने के लिये नही आती थी, यद्यपि मै उन्हे अन्य किसी की अपेक्षा अधिक सहायता दे सकता था। वह राष्ट्रीय आन्दोलन मे अपना योगदान अपने ढग से करना चाहती थी और अपने पति का पुछल्ला और छाया मात्र नही बनना चाहती थी। वह अपनी सार्थकता अपने तथा ससार के सामने प्रमाणित करना चाहती थी। इससे अधिक मुझे किस बात से प्रसन्नता होती ? पर मै अपनी व्यस्तता के कारण सतह के नीचे नही झांक सका और यह न देख सका कि उसकी दृष्टि किस चीज पर है और उन्हे क्या वांछना है।"

उनका शरीर सुकुमार था परन्तु उनकी आत्मा दृढ़ थी। घातक



कमला नेहरू

अस्वस्थता के चगुल मे फसने के बावजूद वह कभी निराश नही हुई। उनके मुखडे पर सदैव आनन्दमयी मुसकान खेलती रहती थी। वह अपनी अस्वस्थता को अपने पति के लिये भार स्वरूप कदापि नही बनने देना चाहती थी। उन्हे ऐसा कोई कार्य नही करने देना चाहती थी जिसमे उनके गौरव और उनकी प्रतिष्ठा को धक्का लगे। एक बार अपनी अस्वस्थता के दौरान मे उन्होने सुना कि जवाहरलाल सरकार को आश्वासन देकर जेल से मुक्त हो जायगे। इससे वह बहुत उद्विग्न हुई और जब जवाहरलाल उन्हे देखने घर में पहुचे तो उन्होने कहा,—"यह मैने क्या सुना है कि तुम सरकार को कोई आश्वासन देनेवाले हो ? ऐसा न करो।" इससे निश्चय ही उनके पति को बडी प्रसन्नता हुई होगी क्योकि उनके हृदय मे उनके प्रति बडा सम्मान है जो साहसी और वीर है तथा किसी कृपा के लिये किसी के सामने झुकते नही है। उन्होने गम्भीर बीमारी के बावजूद कभी आशा नही खोई और सदैव भविष्य पर दृष्टि रखी। शारीरिक कष्टो के होते हुए भी वह प्रसन्नमुख थी। उनकी आखो मे तीक्ष्ण ज्योति थी। मृत्युकाल में भी वह निर्भय और शान्त थी। साहित्यिक कलाकार उनके पति ने इस वीरागना के बारे मे लिखा है—"अपनी गम्भीर अवस्था के बावजूद वह भविष्य मे आशा लगाये हुए थी। उनकी आखो में आभा और तीक्ष्णता थी। मुखडा सामन्यत प्रसन्न रहता था। मैने उनसे वही ग्रहण किया जो उन्होने मुझे प्रदान किया। इसके बदले मैने उसे इन वर्षों मे क्या दिया ? स्पष्टत मै असफल रहा और सभवत उस पर उन दिनो की गहरी छाप पडी।

"स्कूल मे सामान्य शिक्षा ग्रहण करने के अतिरिक्त उन्हे कोई विधिवत शिक्षा प्राप्त नही हुई थी। उनका मस्तिष्क शैक्षिक विधियो से प्रभावित नही हुआ था। वह सरल लडकी की तरह हमारे बीच आई। उसमें ऐसे कोई रग-ढग नही थे जो आज कल अधिकतर देखे जाते है। उसके मुखडे पर कैशोर्य सदैव खेलता रहा, पर जब वह अपनी पूर्ण अवस्था

को प्राप्त हुई तव उसकी ग्राखो मे गहराई और तेज वढ गया। उनसे ऐसा प्रतीत होता था कि इन प्रशान्त कुडो के पीछे तूफान मचल रहा है। वह आधुनिक रमणियो के समान आदतो वाली तथा असंतुलित आधुनिक रमणी नही थी। परन्तु उसने सरलता से आधुनिक जीवन ग्रहण कर लिया था। वह मूलत भारतीय कन्या और विशेषत कश्मीरी कन्या, सवेदनाशील और गौरवशील, वाल्य तुल्य और प्रौढ़, नासमझ और समझ-दार थी। वह अपरिचितो से खिची रहती थी पर परिचितों तथा जिन्हे वह चाहती थी उनके सामने वडी स्पष्टवादी और खुश मिज़ाज थी। वह वहुत जल्दी निर्णय करती थी। यद्यपि ये निर्णय सदैव उचित तथा सही नहीं होते थे, फिर भी वह अपने स्वभाव जन्य पसंदगियो और नापसंदगियो से अडिग रहती थी। उसमे वनावटीपन नही था। यदि वह किसी को नापसंद करती थी तो यह स्पप्ट मालूम पड़ जाता था तथा वह इस वात को छिपाने का यत्न नही करती थी। यदि वह ऐसा प्रयत्न करती भी तो कदाचित् वह इसमें सफल न होती। मैं ऐसे वहुत कम लोगो को जानता हू जिनकी ईमानदारी की छाप मुझ पर उसके समान पड़ी है।"

कमला नेहरू को सदैव नेताओ और साथियो का विश्वास प्राप्त था। वह परिश्रमशील तथा सफल संगठनकर्त्री थी। इलाहावाद के गरीवों के लिये अस्पताल वनवाने के लिये वह वहुत उत्सुक थी। उन दिनों स्वराज भवन के काग्रेस अस्पताल का संचालन मुख्यत. वही करती थी। उन्होने उसके लिये धन सग्रह करने के लिये देश भर में दौरा किया था। वह अपने मित्रो से कहा करती थी, "कृपया मेरे अस्पताल के लिये धन संग्रह करिये।" जव वह अपनी चिकित्सा के लिये भारत छोड़ कर विदेश जा रही थी तव उन्होने गाधीजी से अनुरोध किया था कि एक वड़ा अस्प-ताल वनवाइये जहा गरीव अपनी चिकित्सा करा सके। गांधीजी ने उनकी इच्छा की पूर्ति ,की। कमला नेहरू अस्पताल का शिलान्यास करते हुए महात्मा ने कहा, "वह (कमला) स्वास्थ्य लाभ के लिये यूरोप जा

रही थी। यह यात्रा मृत्यु की खोज मे यात्रा प्रमाणित हुई। जब वह (स्विट्जरलेंड) जा रही थी तब उसने मुझसे कहा कि यदि उसका यूरोप मे देहात हो जाय तो मै स्वराज भवन में जवाहरलाल द्वारा आरम्भ किये गये तथा उसके (कमला) परिश्रम से सचालित अस्पताल को स्थायी रूप प्रदान करने का यत्न करू। मैंने उससे कहा था कि मै इसका शक्ति-भर यत्न करूगा।"

कमला नेहरू स्मारक अस्पताल श्रीमती सरोजिनी नायडू के शब्दो में निजी दुख और व्यक्तिगत शोक का स्मारक ही नही, वरन् उस आत्मा के प्रति राष्ट्रीय सम्मान का भी सूचक है जिसने अपने अल्प-कालीन जीवन मे गिरते हुए स्वास्थ्य और शारीरिक कष्टो के बावजूद राष्ट्रीय सग्राम मे साहसपूर्वक और निकट रूप से भाग लिया तथा भारतीय स्वतत्रता के उद्देश्य की पूर्ति के लिये किसी भी प्रकार की सेवा और त्याग करने की तत्परता दिखाई।

कमला नेहरू मे अपना व्यक्तित्व था। उसका अभाव उनके साथी और सहकर्मी करते है। जिन्हे उनके साथ कार्य करने का अवसर मिला वे कहते है कि उनकी उपस्थिति मात्र प्रेरणाप्रद थी और ऐसा लगता था मानो दया की बहिन ही उनके साथ हो। उन्होने अपने सहयोगियो की कठिनाइया समझने का सदैव यत्न किया तथा उनकी व्यक्तिगत समस्याये तक सुलझाने मे गहरी रुचि ली। वह बडी साहसी, सत्यवादी और व्यवहार मे सीधी और साफ थी। उनके इन गुणो के कारण गाधीजी उनको बहुत चाहते थे तथा उनकी प्रशसा करते थे। वह भारतीय नारी जागरण की मूर्ति थी तथा सेवा कार्य मे जुटी रहती थी। एक बार वह अपने पति के साथ हैदराबाद गई तथा वहा पर्दानशीन औरतो की एक सभा मे उन्होने भाषण किया। इसका उन औरतो पर बडा असर पडा। कुछ दिन बाद हैदराबाद के कई लोगो ने शिकायत की कि उनकी औरतो के रुख मे पतियो के प्रति उग्र परिवर्त्तन के लिये कमला नेहरू जिम्मेदार है।

कमला नेहरू का जन्म १ अगस्त सन् १८९९ को हुआ था। वह श्री जवाहरलाल कौल की पुत्री थीं। उनका जवाहरलाल नेहरू से ६ फरवरी सन् १९१६ को विवाह हुआ। विवाह के समय उनकी अवस्था १७ वर्ष की थी। २८ फरवरी सन् १९३६ को उनका स्विट्जरलैंड में देहावसान हो गया। इस अवसर पर जवाहरलाल नेहरू और उनकी पुत्री इंदिरा उनके पास थी। कमला नेहरू की मृत्यु पर रवीन्द्रनाथ टाकुर ने पंडित जवाहरलाल नेहरू को एक समुद्री तार भेजा जिसमें उन्होंने लिखा—"उसने अपने जीवन और मरण में आप की वीरता को अपनाया। वह उसी वीरता की अमर ज्योति के रूप मे जीवित है।"

कमला नेहरू और जवाहरलाल साथ साथ अधिक समय व्यतीत 'नहीं कर सके। देश में जवाहरलाल की सेवाओ की माग थी और वह एक छोर से दूसरे छोर तक भ्रमण करते थे। कमला नेहरू रोग आक्रांत हो गईं तथा उन्हे चिकित्सा के लिये एक स्थान से दूसरे स्थान जाना पड़ा। इसका रोगग्रस्त महिला पर असर पड़ा। वह एकाकी और निराश हो जाती होंगी परन्तु वह बड़ी समझदार थीं। वह जानती थी कि उनके पति एक पुण्य कार्य में रत हैं तथा देश के लिये प्रशंसनीय कार्य कर रहे हैं। वह उन पर अज्ञात रूप से प्रभाव डालती थी। आरम्भ मे जवाहर-लाल ने इसका पूर्ण महत्त्व अनुभव नही किया। परन्तु बाद मे उन्होंने अनुभव किया कि वह उन पर यथा योग्य ध्यान नही दे रहे हैं। "भारत की खोज" में उन्होने लिखा है—"मेरा पिछला जीवन मेरे सामने खुलता जा रहा था और कमला सदैव मेरे पास खड़ी थी। वह भारतीय नारी या नारीत्व का ही चिह्न बन गई थी। कभी कभी वह हमारे प्यारे भारत के सम्बन्ध मे मेरे विचारो से अजीव ढग से घुल मिल जाती थी। अपनी कम-जोरियो और त्रुटियो के बावजूद वह समझ मे नही आती थी तथा रहस्य-पूर्ण थी। कमला क्या थी? क्या मैं उसे जानता था? उसकी आत्मा को समझता था? क्या वह मुझे जानती और समझती थी?

क्योंकि स्वय में भी रहस्य तथा अज्ञात गहराइयो का असाधारण व्यक्ति हू जिसे खुद नही नाप सका।"

उनका शरीर टूटे हुए फूल के समान था पर उनकी देशभक्ति-पूर्ण भावना की महक मादक थी। वह स्वर्णिम ज्योति पुज का दीपक थी। पीड़ित मानवता के लिये उनके हृदय मे अपार सहानुभूति थी। वह ज़रूरतमदो के प्रति दयालु थी तथा उनकी यथाशक्ति सहायता करती थी। वह भारतीय नव नारीत्व की प्रतिनिधि थी, पर प्राचीन मूल्योसे अवगत थी तथा उनका दृढता और विवेक पूर्वक निर्वाह करती थी। वह कई दृष्टियो से असाधारण महिला थी। आज जब हम उनका वडा अभाव अनुभव करते है तो हमारे मुख से ये शब्द निकल पडते है—

"मै इसकी कल्पना नही कर सकता कि तुम चली गई। तुमने धरती से प्यार किया, तुम्हारी आखो में आभा थी जो तुम्हारी मुस्कान मे लहराती थी। वह मुस्कान जो मृत्यु को गीत, कविता या नाटक समझती है। तुम्हारा तो नित नूतन जन्म होता है तथा नये रूप में वैभव को अचरज में डालती हो। अरे! क्या देहात होने पर ऐसा यौवन, ऐसा प्रेम और हुलसित रहने के लिये ऐसी वासना कभी मृत हो सकती है?"

कमलाजी का जीवन दीपक की उज्ज्वल ज्योति के समान था। यह कम्पित होती थी, प्रज्वलित होती थी, प्रगाढ होती थी और सदैव दीपक के तल मे स्थित तेल का उपयोग करते हुए शुष्क भी होती थी। इसमे विद्युत का दिखावटीपन नही था। इसमें गैस के प्रकाश की नीरसता नही थी। यह सजीव, निर्बन्ध और स्वतत्र ज्योति थी। एक दिन एकाएक तेल पूर्णत समाप्त हो गया, ज्योति झलमला उठी तथा वर्षा के आसुओ से विगलित रात्रि का आभास देती हुई वुझ गई।

कमलाजी मे वनावटीपन विलकुल नही था। उनमे कोई व्यक्तिगत महत्वाकाक्षा नही थी। मूक और सच्ची सेवा करना ही उनका जीवन व्रत

था। वह लज्जालु और प्रेममयी थी। अपनी अस्वस्थ अवस्था में भी उन्हे दूसरों की चिंताओ और कठिनाइयो का खयाल बना रहता था और उनकी सहायता करने के लिये लालायित रहती थी। जब भी वह किसी को दुख दर्द मे देखती तो उनका दिल भर आता था। सेवा धर्म के अतिरिक्त उनका कोई धर्म नही था।





वल्लभभाई पटेल

वल्लभभाई पटेल

'भारत के लौह पुरुप' सरदार वल्लभभाई पटेल को समझने के लिए यह ग्रावश्यक नही है कि आपका उनसे निकट परिचय होता। आपको केवल उनके चेहरे पर ध्यान देना था। उनके चौडे जवडे, दृढ मुद्रा और वेधक ग्राखे आप पर रोव जमा देती। वह देर तक वाद-विवाद नही करते थे, अधिक समझाते भी नही थे। वह लोगो की वातें सुनते थे, निर्णय करते थे और उसे कार्यान्वित करते थे। उनका दृढ मुख, गालो की ऊँची हड्डिया और जवडे की दृढ रेखायें यह प्रकट करती थी कि वह वाक्वीर नही, वरन् कर्मवीर थे। उनकी भारी पलको से कुछ झँपी आखें किंचित गोपनीयता इगित करती थी। वह ऐसे पुरुप थे जो कोई दुराव नही रखते थे। यदि कोई कुछ क्षण उनकी ओर देखता तो उनके प्रभावशाली व्यक्तित्व से प्रभावित हुए विना नही रहता था। उनकी उपस्थिति से जनता में विश्वास तथा शक्ति वढती थी। कार्य-शीलता उनके चेहरे पर अकित थी। उनके चेहरे पर लेनिन और तिलक के मिश्रित चेहरो की छाप सी दिखाई पडती थी। उस पर विद्रोह और असमझौता-वादी वृत्ति स्पष्ट अकित थी। आप यह तुरत अनुभव कर सकते थे कि सकटकाल में उनके साहसपूर्ण नेतृत्व पर भरोसा किया जा सकता था।

अगस्त सन् १९४२ मे जव वम्बई मे ऐतिहासिक 'भारत छोडो' प्रस्ताव पर विचार हो रहा था तव मैंने पटेल को ब्रिटिश सरकार के खिलाफ आग उगलते, व्यग वाण छोडते और घृणा व्यक्त करते हुए देखा। मेरी वगल मे पत्रकारो की पक्ति में कुछ विदेशी सवाददाता भी वैठे थे जो इस देश के लिए नये थे। वे श्रोताओ द्वारा पटेल के भाषण पर की

गई गगनभेदी हर्ष-ध्वनि पर आश्चर्य चकित थे। उनमे से एक ने पूछा— "लोग इतने जोरो की करतल-ध्वनि क्यों कर रहे है? क्या यह श्री गाधी है?" विदेशी सवाददाता को बताया गया कि यह गाधी नही, पटेल है। "क्या यह वही पटेल है जो काग्रेस दल के निर्मम सूत्रधार है और जिनको जान गन्थर ने जिम फार्ले से तुलना की है?" "हा, वही," मैंने कहा।

पटेल कठोर दलीय सूत्रधार और दृढ सकल्पशील संघटनकर्त्ता के रूप मे विख्यात थे। उनके नाम से ही देश और विदेश में दृढता और निर्ममता का बोध होता था। इससे वह कुछ अलोकप्रिय हो गये थे क्योकि अनुशासन अधिकांश लोगो के लिए असुविधाजनक होता है। जब के० एफ० नरीमेन और एन० बी० खरे के विरुद्ध अनुशासन की कारवाई की गई तथा सरदार ने सुभाषचन्द्र बसु का विरोध किया तब उनकी (सरदार की) अलोक-प्रियता चरम सीमा पर पहुच गई थी। उस समय यदि मतदान लिया गया होता तो पटेल भारत के सबसे अवा-छनीय व्यक्ति घोपित होते। सौभाग्य या दुर्भाग्य से काग्रेस कार्य समिति के ऐसे सब निर्णय के लिए जो अनुचित समझे जाते थे, सरदार ही दोषी ठहराये जाते थे।

सरदार के कठोर और रुक्ष बाह्य आवरण से ऐसा लगता कि वह हृदयहीन थे। पर इस कठोर पुरुष का, जो कार्य लेना जानता था तथा कठोरता से कार्य करता था, अभ्यंतर बडा कोमल था। वह बडे दया-वान् थे और कभी कभी बडे कोमल हृदय का परिचय देते थे। उनके मित्रो का कहना है कि उनसे सच्चे मित्र और विश्वसनीय साथी का मिलना कठिन था।

उस दूषित दृष्टिवाले और भ्रष्ट बिवर्ले निकल्स ने एक बार लिखा था, "पटेल के बारे मे पश्चिम के उदार समाचार पत्रो मे अधिकतर समाचार नही छपते। काग्रेस के सूचना प्रकाशन विशेषज्ञ ऐसा इन्तजाम

करते है जिससे ऐसा ही होता है।" यदि निकल्स ने सत्य की शोध करने का यत्न किया होता तो उसे ज्ञात हो गया होता कि पटेल को पश्चिम के समाचार पत्रो मे प्रकाशन प्राप्त न होने का कारण काग्रेस नही, वरन् स्वय पटेल थे जो देश मे फुदकनेवाले विदेशी पत्रकारो को अपने पास नही फटकने देते थे। विवर्ले निकल्स ने कही सरदार को काग्रेस का भयकर जल्लाद भी कहा था। हा, वह जिन लोगो से घृणा करते थे उनके लिए भयकर जल्लाद थे। भारतीय स्वतत्रता-सग्राम के सभी शत्रुओ के लिए वह भयकर प्रतीत होते थे। अहमदनगर के किले से मुक्त होने के बाद अपने स्वभाव के अनुसार खरे वक्तव्य मे उन्होने कहा कि यदि भारत मे कोई फासी की सज़ा के लायक है तो वह लार्ड लिनलिथगो है, जो बगाल के अकाल के लिए ज़िम्मेवार है। सन् १९४२ के आन्दोलन में भाग लेनेवाले देशभक्त सर्वथा निर्दोष है।

सरदार पटेल का जन्म ३१ अक्तूबर सन् १८७५ मे गुजरात के खेडा ज़िले मे हुआ। उनके पिता ने सन् १८५७ के स्वतत्रता सग्राम में भाग लिया था। वल्लभभाई अपने बाल्य-काल मे अपने शिक्षको तथा दूसरो के लिए सिरदर्द बने रहते थे। उनकी विद्रोही भावना का दमन करना कठिन था। वह भावना क्रियाशीलता के लिए छटपटाती रहती थी। सरदार इग्लैड गये तथा वहा से बैरिस्टर बनकर लौटे। उनकी वकालत अच्छी चलती थी। न्यायाधीशो तथा सह-कर्मियो का सम्मान प्राप्त था। वह गाधीजी के सम्पर्क मे सन् १९१६ मे आये। तब से उन्होने गाधीजी का अनुगमन पूर्णत, एक प्रकार से अधानुकरण किया, क्योकि उन्हे उनकी भूल-शून्य निर्णय-शक्ति मे पूर्ण विश्वास था। गाधीजी को भी सरदार की उनके प्रति आस्था और सघ-टन-शक्ति मे पूर्ण विश्वास था। सरदार ने जब सन् १९२८ मे ऐतिहा-सिक बारदोली सत्याग्रह का सफल नेतृत्व किया तब उनकी प्रसिद्धि शीर्ष-बिन्दु पर थी। पडित नेहरू के शब्दो मे "यह सघर्ष ऐसी वीरता

के साथ चलाया गया कि शेप भारत ने इसकी प्रशसा की। वारदोली के किसानो को काफी सफलता मिली। इस आन्दोलन की वास्तविक सफलता इस वात मे थी कि इसने देशभर के किसानो को प्रभावित किया। वारदोली भारतीय जनता की आशा, शक्ति और विजय का चिह्न तथा प्रतीक वन गया।"

सरदार पटेल सन् १९३१ में भारतीय राष्ट्रीय काग्रेस के अध्यक्ष निर्वाचित हुए। वह जीवन के अतिम क्षणो तक देश के सव से शक्तिशाली नेताओ मे थे। सरदार का प्रभावशाली व्यक्तित्व था, पर उनसे भी प्रभावशाली उनकी साधनाशील पुत्री मणिवेन है जो उन पर भी प्रभाव जमाये रहती थी। आगुन्तको के लिए उतने आतककारी सरदार नही थे जितनी मणिवेन थी। सरदार अपनी पुत्री पर अगाध स्नेह रखते थे। पुत्री ही उनके लिए साथी, मित्र और निजी सचिव थी। इस वात से सरदार के एक पत्र का स्मरण हो आता है जो उन्होने अहमदनगर के किले से मणिवेन को लिखा था। इस पत्र मे उन्होने लिखा था कि "अव समय आ गया है जव तुम्हे अपना स्नेह और अपनी साधना किसी अन्य पर अर्पित करने के लिए तैयार होना चाहिये; क्योकि मै वृद्ध हो चला हू, स्वास्थ्य गिर रहा है तथा मैं किसी भी दिन इस ससार से चल वसू।"

गाधीजी के हृदय मे सरदार के प्रति वड़ा आदर था, उन्हे पुत्रवत् प्यार करते थे। वह सरदार की सवल सामान्य वुद्धि से प्रभावित थे। गाधीजी ने एक वार उनकी प्रशसा मे लिखा था, "सरदार वल्लभभाई पटेल की संगति मे आना मेरे लिये वड़ा सुयोग था। मै उनकी अनुपम वीरता से अवगत था, पर मुझे उनके साथ रहने का ऐसा अवसर नही मिला था जैसा इन १६ महीनो मे मिला। मुझ पर वह जैसा स्नेह रखते थे, उससे मुझे अपनी मा का स्नेह स्मरण हो आता था। मुझे उनके मातृयोचित गुणो का भान ही नही था। यदि मुझे कुछ भी हो जाता

तो वह फिर स्वय आराम न करते। मेरी सुविधाओं का बारीकी के साथ खुद इतजाम करते।"

सरदार अपने शत्रुओं के लिए आतक तथा मित्रो के लिए सहारा थे। इस महान् सेनानी ने अपनी जनता की नितात सचाई और ईमानदारी से सेवा की। यह शक्तिशाली नेता अपने देशवासियो के लिए शक्ति स्तभ था। वह कभी डिगा नही, झुका नही। वह अपने मन को अच्छी तरह जानते थे और समयानुसार तथा विधि अनुसार कार्य करना जानते थे। जब वह बहुत अस्वस्थ थे तब भी अपने उच्च और भारी दायित्वो मे घबडाते नही थे। जब वह पूर्ण विश्राम और चिकित्सा के लिए बम्बई पहुचाये गये तब भी अपने साथ कुछ महत्वपूर्ण कागज-पत्र (फायले) काम के लिए साथ लेते आये। बम्बई में उनका स्वास्थ्य बिगडता ही गया और १५ दिसम्बर सन् १६५० को उन्होने अतिम सास ली। भारत ने अपने एक शक्तिशाली निर्माता के निधन का शोक मनाया। उन्होंने भारतीय रियासतो का भारत में विलयन कर जिस नवभारत का निर्माण किया वह कार्य इतिहास के पन्नो की सदैव शोभा बढायेगा। भावी पीढिया देश के प्रति उनकी सेवाओं के लिए उन्हे सदैव स्मरण करेंगी।



श्रीमती सरोजिनी नायडू

भारतीय राजनैतिक क्षेत्र मे एक अत्यन्त सजीव स्फूर्तिमयी तथा आकर्षक मूर्ति श्रीमती सरोजिनी नायडू थी। वह सन् १९२५ मे राष्ट्रपति (काग्रेसाध्यक्ष) थी, हालाकि हिन्दी व्याकरण के अनुसार उनको राष्ट्रपति न होकर राष्ट्रनेत्री होना चाहिए था। कई वर्षो तक काग्रेस की कार्यकारिणी समिति की सदस्या थी। जीवन की इस अप्रत्याशित सफलता का रहस्य उनकी वाग्वैदग्ध्य मिश्रित कुशाग्रता तथा योग्यता थी। वह कुछ चापल्य से अनुमोदित मानवता की जीवित प्रतिमा थी। काग्रेस की कार्यकारिणी समिति की वह एकमात्र सदस्या थी जिन्होने कभी-कभी गाधी जी के प्रति सप्रेम असम्मान दर्शाया; महात्माजी को उन्होने 'भारत का नन्हा मिकी माउस' कहा (मिकी माउस अग्रेजी सिनेमा का एक हँसोड़ चरित्र है, जिसका शरीर चूहे जैसा है और वह अपनी करतूतो से कई छकाने वाले कार्य करता है)। जार्ज स्लोकोम्व ने लिखा था, "वह औरतो में सबसे अधिक खतरनाक और प्रतिभाशाली, परिहासमयी मुखर औरत श्रीमती सरोजिनी नायडू! वह कोई राजनैतिक कट्टरपन्थी नही है। सावली, मुहफट और मुस्कुराती हुई, प्रशसनीय रसोई करने वाली, एक प्रसन्न हँसोड साथी, एक ठडे आलोचक दिमाग वाली, वह एक ऐसी पलेथन है जो कभी-कभी गांधीजी के ऊपर गूथे हुए प्रशसा तथा नायक पूजा के आटे को हल्का कर देती है। वह महात्माजी के छोटे से दरबार की मान्यताप्राप्त हुई विदूषिका है। भारतीय क्रेमलेन की राडेक और भारतीय क्राति के जिरोन्डिनो में मैदाम रोलेन्ड है!"

श्रीमती सरोजिनी नायडू न केवल एक नेत्री और कवियित्री थी बल्कि वह स्वय एक सस्था थी। जो भी उनके सम्पर्क मे आया वह उनकी प्रखर



सरोजिनी नायडू

बुद्धि, गहरी मानवीय भावना और सहृदयता से प्रभावित हुए बिना नही रहा। आधुनिक भारत की वह एक सीमा-चिह्न थी और भारतीय इतिहास की एक युगनिर्मात्री थी। वह कवियित्री, देशभक्त, राजनीतिज्ञ, सुभाषिणी, सुगृहिणी कारागामिनी पक्षी, हृदय मैत्री, जन प्रेरणादायिनी, महागीत गायिका, बृहत्स्वप्न दर्शिका, लयकारिणी, तार्किक, सुषुप्त राष्ट्र की उद्बोधिनी, लाखो व्यक्तियो की आदर्श वह एक आदमी से अधिक हिम्मतवाली होते हुए सर्वांगीण नारी थी। वह राजनीति, कविता तथा साडी की रूपरेखा, जिस विषय मे आप बहस करना चाहे उसे आपके साथ उसी सहूलियत के साथ कर सकती थी। मित्रो के साथ गप्प करने की ओर उनकी रुचि, देश की स्वतन्त्रता के प्रति प्रेम से थोडा ही कम थी। वह वीरागना थी, पर अतुलित मानवी भी थी।

सरोजिनी देवी नेहरू परिवार मे बडी बहिन के समान थी। जब जी चाहता वह जवाहरलाल नेहरू के साथ आत्मीयतापूर्वक वार्तालाप करना शुरु कर देती थी और उनके गुस्से को कुछ चुटकिया लेकर ठडा कर देती थी। एक दिन कई युवतिया नेहरूजी का भाषण सुनने गई। भाषण के बाद श्रीमती नायडू ने कहा "जवाहर ऐसा न सोचना कि वे सब युवतिया जो तुम्हारे भाषण सुनने आती है, समाजवादी हो गई है। वे केवल तुम्हारा सुदर मुखडा देखने आती है।" जब तक वह आनद भवन मे रहती थी तब तक पूरे मकान पर अपना इस तरह आधिपत्य प्रकट करती थी, जिसकी नकल नही की जा सकती। मुझे याद है कि श्रीरणजीत पडित के अवसान के बाद श्रीमती विजयालक्ष्मी पडित को सरोजिनी देवी से कितना अधिक आश्वासन मिला था। श्रीमती नायडू उस समय दिल्ली में थी, पर वह अपनी पुत्री पदमजा नायडू को साथ लेकर फौरन इलाहाबाद चली आई। स्टेशन पर रेल से उतर कर श्रीमती नायडू धीरे धीरे दो एक आदमियो की मदद से उस कार पर चढी जो उनको श्रीमती पडित के घर ले गई। उनके पहुचते ही श्रीमती पडित को बडी सान्त्वना मिली

और वहुत ढाढस वधा । श्रीमती पडित को गले से लगाकर सरोजिनी देवी वोली, "स्वरूप धीरज रक्खो, मै इस समय तुम्हारी नैसर्गिक हिम्मत को देखना चाहती हू । अपने दिल को टूटा हुआ मत समझो । प्यारा रणजीत हमेशा हमारे साथ रहेगा ।"

श्रीमती नायडू कई वार जेल गई थी और उन्होने हमेशा जेल के जीवन को प्राकृतिक सरलता के साथ विताया । देश की स्वतत्रता के लिए उन्होने वहुत कुछ सहा और त्याग किया । सन् १९४२ मे उनकी सवसे वडी परीक्षा हुई जव कि उनको आगा खा महल मे महात्मा गाधी, कस्तूरवा और महादेव देसाई के साथ वद कर दिया गया था । यह मशहूर है कि सरोजिनी देवी महात्मा गाधी की वड़ी सतर्कता के साथ देख रेख करती थी और उनकी सहूलियत और आराम का ध्यान रखती थी । जव वह आगा खा महल से छोड दी गईं तो एक दिन आनद भवन के वरामदे में ध्यानावस्थित सी अकेली वैठी हुई थी । मै धीरे धीरे उनके पास गया और वह वोली, "तो तुम आ गए ! वोलो क्या चाहते हो ? जल्दी वोलो और फिर मुझे अकेला छोड़ दो ।" मैने उनसे कहा कि "देश यह विवरण जानने के लिए उत्सुक है कि महादेव देसाई का अवसान आगाखा महल में कैसी परिस्थिति मे हुआ । वडी कृपा होगी, यदि इस किस्से को मुझे सुना दें ।" मैने उनसे यह भी कहा कि मै आपके साथ यात्रा करने को प्रस्तुत हू । वह राजी हो गईं और मै उनके साथ यात्रा पर चला । कानपुर के पास उन्होने मुझे सुनाया कि महादेव भाई एक शीशे मे अपना मुह देख रहे थे कि अकस्मात् धम से जमीन पर गिर पडे । फौरन यह पता चला कि महादेव इस संसार मे नही रहे । महात्मा गांधी अपने प्रिय शिष्य को देखने के लिए आए । उन्होंने पुकारा—"महादेव ! महादेव !!" पर शिष्य की वाणी मौन थी और गुरु के आह्वान का प्रत्युत्तर न मिलने का यह प्रथम अवसर था । श्रीमती नायडू ने वतलाया कि वापू ने कापते हुए हाथो से महादेव को शीतल जल से नहलाया । वह अतीव शोकजन्य दृश्य

था। जब मैंने इस करुण कथानक को लोगो तक पहुचाया तो जनता हिल उठी और सरकार श्रीमती नायडू के इस कथा को बताने के कारण कुछ चिढ गई। श्रीमती नायडू ने पत्रकारो से कुछ और गभीर बाते कह दी और दिक्कतें होने लगी। उनको आज्ञा मिली कि पत्रकारो से न मिले और उनके भाषणो तथा वक्तव्यो पर जो रोक लगा दी गई उनसे पता चलता है कि साम्राज्यवादी तानाशाह उनके भाषणो से कितना घबराते थे। वे समझते थे कि इनसे जनता फिर विद्रोह के लिए भडक उठेगी।

भाषण देते समय श्रीमती नायडू श्रोताओ को मत्र-मुग्ध कर देती थी। उनके शब्द-चित्र साकार, भाषा शुद्ध तथा वाणी सगीतमय होती थी। वह सहस्रो मचो की नायिका थी और उनकी भाषण-प्रतिभा अनन्य थी। कई वर्ष पहले उन्होने इलाहाबाद यूनिवर्सिटी के सिनेट हाल मे विद्यार्थियो की सभा मे भाषण किया था। सभा स्थल श्रोताओ से खचाखच भरा हुआ था तथा प्रसिद्ध वक्ता के भाषण की प्रतीक्षा कर रहा था। भाषण का विषय था "प्रहरी. प्रभात की खबर है ?" उन्होने ५० मिनट तक भाषण किया। उनका प्रत्येक वाक्य इसी लय से आरम्भ होता था—"प्रहरी, प्रभात की खबर है ?" भाषण समाप्त होने पर कई दिनो तक छात्र श्रोताओ के ओठो से शब्द सुनाई पडते थे—"प्रहरी, प्रभात की खबर है ?" सन् १९२४ मे उन्होने पूर्व और दक्षिण अफ्रीका के उपनिवेशो मे यूनियन के निवासियो की तरफ से एक राजनैतिक कार्य करने के लिए दौरा किया। गोलमेज सभा के सिलसिले मे जब वह लदन गई तो भारतीयो की स्वतन्त्रता की माग के बारे मे उनको कई सभाओ मे भाषण देने पडे। इग्लैंड से वह अमेरिका गईं। वहा जाकर उन्होने एक दौरा भाषण देने के लिए किया और वहा की जनता को भारतीय दृष्टिकोण के उचित विवेचन से बहुत प्रभावित किया। इस प्रकार उन्होने, कैथरिन मेयो के गन्दी पुस्तक "मदर इन्डिया" के लिखने से जो जहर फैल गया था, उसको बडी हद तक दूर किया। इस दौरे के विषय मे वह कहती थीं—"ज्यो ही मेरा जहाज

अमेरिका पहुचा, मुझको अमेरिका के पत्रो के सम्वाददाताओ ने घेरा और पूछा, "आपकी कैथरिन मेयो के विषय मे क्या राय है ?" मैंने कहा, "कैथरिन मेयो—यह किसका नाम है ? मेरे विचार मे उसकी कब्र मे अकित करने के लिए यह सबसे अधिक उपयुक्त पक्ति है ।" अमेरिका में अपने भाषणो मे उन्होने किसी कृपा की याचना नही की । वह किसी दवा के लिए नही गिड़गिडाईं । उन्होने केवल भारत के उद्देश्य को ससार के समक्ष प्रस्तुत किया । अमेरिकनो की एक सभा मे भाषण करते हुए उन्होने कहा, "हम पश्चिम के किसी भी तत्त्व से सहानुभूति की याचना नही करते । हमारा पश्चिम के किसी तत्त्व पर विश्वास नही है । हमारा इग्लैंड के किसी तत्त्व सबसे अधिक उदार तत्त्व पर भी विश्वास नही है । इसका कारण सीधा और साफ है । ब्रिटिश उदारवादी, मजदूर दलीय या कट्टरपथी कोई भी भारत से हाथ धोना सहन नही कर सकता । हम याचना की झोली लिए नही फिरते । हम अपनी ही शक्ति से खड़े है ।"

सन् १९४५ मे उन्होने दिल्ली मे पत्रकारो को "भारत छोडो" प्रस्ताव के सबध मे भारत की स्थिति स्पष्ट की । कांग्रेस कार्यसमिति की वही एक-मात्र सदस्या जेल के बाहर थी तथा सभी उनकी ओर नेतृत्व तथा दिशा दर्शन के लिए ताक रहे थे । उस दिन श्रीमती नायडू अपने पूरे रूप में थी । वह अपनी जनता पर किए गए सरकारी अत्याचारो से द्रवित तथा भारतीय जेलो में बद हजारो देशवासियो की दशा से दुखित थी । उन्होने भारतीय और विदेशी पत्रकारो को ओजस्वी वाणी में कांग्रेस की स्थिति को समझाया । उनका भाषण असाधारण था तथा श्रोता उनकी राजनीतिकता से प्रभावित हुए । वह कुछ और विचलित थी । उनका हृदय सात्त्विक कोप से भरा हुआ था । उन्होने ब्रिटिश सरकार की तीव्र भर्त्सना की और कहा कि, "भारत ने नैतिक प्रश्नो पर अपना निर्णय किया है तथा कांग्रेस कार्यसमिति अपने निश्चय पर निश्चल रहेगी, चाहे इसका परिणाम कुछ ही क्यो न हो ।" उन्होने ब्रिटिश सामाज्यशाहियो को

चुनौती दी कि वे नज़रवद नेताओ पर खुली अदालत मे मुकदमा चलाए तथा यदि दम हो तो उनका अपराध प्रमाणित करे। इस पत्रकार सम्मेलन पर उनकी प्रतिभा का असाधारण प्रभाव पडा। अपनी वार्ता को समाप्त करते हुए उन्होने विनोदपूर्वक कहा, "पत्रकारो, यदि मै मर जाऊ तो तुम जनता से कहना कि श्रीमती नायडू पत्रकारो से बातें करते-करते चल बसी।"

उनकी वाग्वैदग्धता के बाद दूसरा नम्बर उनके व्यग का आता था। उनके साथ आपका एक क्षण भी अनाकर्षक नही हो सकता था। विश्व-विद्यालयो के आचार्य, राजनीतिज्ञगण, महाराजा, राजा, हिन्दू, मुसलमान ईसाई, पारसी सब कोई उनकी सगत मे रहना पसद करते और उनकी छटकती हुई गोष्ठी का रसास्वादन करना चाहते थे। अपनी पुस्तक 'इन्साइड एशिया' मे जान गुन्थर ने उनकी विशेष तारीफ की है और एक रोचक किस्सा बताया है—

"श्रीमती नायडू के प्रभावशाली तथा अपने आलोक मे चढाई सी करने वाले व्यक्तित्व को कुछ पक्ति-समूहो मे कोई कैसे बंद कर सकता है? एशिया की एक महानतम महिला, श्रीमती नायडू एक कवियित्री, क्रातिकारी, हिन्दू मुस्लिम ऐक्य के लिए दिल लगाकर काम करने वाली, कई भाषाओं में विपद भाषण देने वाली, एक राजनीतिज्ञ, एक सैनिक है। श्रीमती नायडू एक बहुत ही छा जाने वाली व्यक्ति है। किस्सा यह है कि एक बार पुलिस उनको पकडते हुए घबराती थी और वह एक थाने से दूसरे थाने मे जा कर कहती थी कि मुझे पकडो और जेल मे डालो। पुलिस ने जब उनको जेल मे भेज दिया तो फिर आज्ञाकारी सेवक की तरह पूछा कि हुक्म दीजिए अब क्या करे।"

सरोजिनी देवी फरवरी १३, सन् १८७९ को हैदराबाद दक्षिण मे पैदा हुई। उनके पिता अघोरनाथ चटर्जी उन्नीसवी शताब्दी के बगाल की एक विभूति थे। अपने जीवन का एक बडा हिस्सा उन्होने अपने

प्रात से दूर हैदराबाद मे विताया। सरोजिनी उनकी लाडली वच्ची थी और उसको प्रारम्भिक शिक्षा उन्होने अपने आप दी। श्रीमती नायडू ने एक वार कहा कि पिता जी की देख रेख मे मेरी शिक्षा वैज्ञानिक थी। उन्होने यह इरादा कर रक्खा था कि मुझे या तो वडा वैज्ञानिक या सगीतज्ञ वनायेगे। पर उनसे और अपनी मां से जो कवित्व की ओर रुझान मैने पाया था वह काफी दृढ निकला। एक वार जव मैं ११ वरस की थी तो एक गणित के प्रश्न के साथ सर मार रही थी। मेरी निराशा की सासो के साथ सवाल का हल तो नही निकला, पर एक पूरी कविता निकल पडी। मैने उसे लिखा। कहा जाता है कि इस घटना से उनको अपनी कवित्व शक्ति का प्रथम आभास मिला। यद्यपि उन्होने अपनी कविता को अग्रेज़ी भाषा में छदोवद्ध किया है पर उनकी भावना वस्तुत भारतीय है और उनमे एक अपना विशेष सौदर्य और आकर्षण है। उनकी कविता की विशेषता, विचारो का प्राधान्य, सगीत का माधुर्य्य और भाषा के ऊपर अधिकार है। उनमे पूरे खिले हुए कमल की सी ताज़गी, मिठास और स्वाभाविकता है और सामुद्रिक पक्षियो का सा सगीत है। सरोजिनी देवी मे कुछ प्राच्य जादू सा है। यदि वह भारतीय इतिहास के किसी दूसरे काल मे पैदा हुई होती तो उनका सवध सुमधुर कोमल कान्त पदावली से अधिक रहता और राजनीति के रुक्ष झटको से कम। कल के भारत मे इस तरह की प्रतिभा और भावनामयी मूर्ति जो अपने देश के दासत्व से अभिज्ञ हो, कल्पना के महलो मे रहकर जीवनयापन नही कर सकती।

श्रीमती सरोजिनी नायडू की काव्य प्रतिभा की मान्यता देश मे ही नही वरन् विदेशो में भी मिली है। उनकी कविता मे जीवन और मानवीय भावना हिलोरे मारती रही है। उनकी कविताओ के सवध मे सर एडमड गास ने लिखा है—"उनके गीतो मे भारत की धरती के ही वोल है। यद्यपि वह अपने कवित्व की अभिव्यक्ति के लिए आग्ल भाषा का उपयोग करती है, परतु उनकी भावना का पश्चिम से कोई ववन नही है।

उसमें उष्ण कटिवधीय और आदि मानवीय भावनाओ की झलक है। मेरा विश्वास है कि यदि उनका इस दृष्टि मे सावधानी पूर्वक और मनन-पूर्वक अध्ययन किया जाय तो उनसे पूर्व के धुधले स्थलो पर उसी प्रकार प्रकाश पडेगा जिस प्रकार कोई विचारक या इतिहास डाल सकता है।" उनकी कविताओ मे मानव हृदय के लिए महान आकर्षण है। उनके लिए स्पेंसर की ये पक्तिया युक्तिसगत ठहरती है—

"उनके शब्द मधु धार के समान थे, जो मधु के छत्ते से धीरे-धीरे प्रवाहित होती है। उनमे सुनने वाले के हृदय को अज्ञात ही द्रवित करने तथा मृत पुरुष को भी जीवित करने की शक्ति है।"

सौन्दर्य के प्रति प्रेम ने उन्हे कवियित्री तथा मानवता के उत्पीडन के प्रति सहानुभूति ने उन्हें राजनीतिक बना दिया। उन्होने लिखा—

> "अरे भाग्य तूने मुझे कष्टो की चक्की मे अनाज के दाने के समान पीस डाला है। पर देख मै उसे अपने आसुओ से गीला कर और गूथकर आशा की रोटी उन्हे आराम देने और खिलाने के लिए तैयार करूगी जिनके अगणित हृदयो के लिए कष्टो की झाडी के अतिरिक्त और कोई फसल लहराती ही नही है।"

यह उत्तर प्रदेश का महान सौभाग्य था कि ऐसी प्रशस्त, विज्ञ तथा गुणवन्ती भारतीय ललना ने राज्यपाल के पद पर आसीन होकर स्वतत्रता के प्रथम प्रकम्प के बाद राज्य के भाग्य का सचालन किया। अफसरो तथा मन्त्रियो मे वह बहुत प्रिय रही और अपने कार्यो को पूर्ण प्रजातन्त्रात्मक बनाया। लखनऊ का राज्य भवन इस महान महिला के अट्टहास से गूजा और सध्या समय बडे-बडे दरबार लगे, जहा गरीब, अमीर, हिन्दू, मुसलिम, कवि, राजनीतिज्ञ, अफसर सभी इकट्ठा होकर श्रीमती नायडू के सजीव हास परिहास का रस लेते थे। यह शोक की बात है कि वह उत्तर प्रदेश में अल्प काल के लिए रही। बहुत ही स्वल्प समय के बाद यह मधुर पक्षी पिजडे से उड गया और छोड गया एक स्मृति तथा मीठी झकार।



राजगोपालाचारी

श्री चक्रवर्ती राजगोपालाचारी के राजनीतिक जीवन का सूक्ष्म अध्ययन करने पर हमें यह पूर्णतया ज्ञात हो जायगा कि जीवन में सफलता और असफलता को विभाजित करने वाली लकीर बहुत पतली होती है। सन् १६४१ से लेकर सन् १६४६ तक राजाजी भारत के राजनीतिक क्षेत्र में सबसे अधिक अप्रिय व्यक्तियों में से थे। यह कल्पना करना कठिन था कि उनका ऊपर आना फिर कभी संभव हो सकेगा और वे अपने देशवासियो का समर्थन प्राप्त कर सकेंगे। सन् १६४२ में वह अपने अनेक सहकारियो द्वारा कोसे गए तथा उनकी वक्तृता उनके सहकारियो तथा दूसरे कांग्रेस जनो को तीर की तरह बेधती थी। उनके ऊपर जले पर नमक छिड़कने का आरोप लगाया गया। जितना अधिक वह मुसलिम लीग को मनाने तथा अंग्रेजों को प्रसन्न करने का प्रयत्न करते थे उतना ही अधिक उनके साथियो को खलता था। उनका नाम जंनता के लिए एक दु स्वप्न के समान हो गया तथा वे अलोकप्रियता की ऊंची चोटी पर पहुच गए थे। मुझे स्मरण है कि जब नैनी सेंट्रल जेल में चोरी से आए हुए समाचार-पत्र से राजाजी के संबंध में कुछ समाचार पढ सुनाने का मैंने प्रयत्न किया तो एक नेता ने मुझे मना कर दिया था कि राजा जी के संबंध मे मै उन्हें कोई समाचार न दू। राजाजी कई वर्ष तक अकेले स्वनिर्धारित मार्ग पर चलते रहे। इस अवधि के अंदर सभाओ मे उनके भाषणो मे रुकावट डाली जाती रही। समाचारपत्रो में उनकी बडी कटु आलोचना की गई तथा एक दो बार उनके ऊपर कीचड और तारकोल तक फेंका गया। इन तमाम बातो ने उनको निरुत्साहित नही किया और वह जनता के क्रोध का शान्ति से, अत्यन्त धैर्यपूर्वक सामना करते रहे।



सी० राजगोपालाचारी

सन् १९४१ में वह इलाहाबाद से होकर गुजरे और मैंने रेलगाडी मे उनसे भेंट की। मैंने उनको बताया कि उनके भाषणो और वक्तव्यो पर लोग बहुत क्षुब्ध हो रहे है। उन्होंने कहा, "इसका यह अर्थ नही है कि वे सही है और मैं गलत हू। इससे केवल यह प्रकट होता है कि वे क्रुद्ध हैं और मैं नही हू। क्रुद्ध व्यक्तियो का निर्णय इतना सही नही होता, जितना कि उन लोगो का जो कि क्रोध मे नही है।" मैं तर्क को और आगे न बढा सका और उनकी तरफ गौर से ताकने लगा। वह पूर्णरूप से प्रसन्न तथा विश्वस्त दिखाई पड रहे थे।

भारत ने सन् १९४७ मे अपने इतिहास मे एक नया पृष्ठ खोला। पहली बार एक भारतीय भारत का गवर्नर जनरल नियुक्त हुआ। यह चुनाव कई दृष्टियो से महत्वपूर्ण था तथा सभी जगह पसन्द किया गया। इस पद पर किसी लोक प्रिय नायक को प्रतिष्ठित नही किया गया। इसके लिए एक राजनीतिज्ञ की नियुक्ति हुई जिसकी परिपक्व बुद्धिमत्ता, तीक्ष्ण अन्तर्दृष्टि तथा व्यापक अनुभव का समय आने पर बडा उपयोग हो सका था। यह भारत तथा पाकिस्तान के पारस्परिक सबधो की दृष्टि मे अच्छा हुआ तथा भारत और ब्रिटेन के सबधो की दृष्टि मे भी वाछनीय था। वह उखड जाने या किसी की भभकी मे आने वाले प्राणी नही है। बुद्धि में वह किसी से भी कम नही है तथा किसी वस्तु को उसकी अच्छाई और उपयोगिता के विषय में विश्वस्त हुए विना, वह स्वीकार नही कर सकते।

'पैगम्बर का आदर अपने घर मे नही होता' वाली कहावत यदि कभी भी सच थी, तो वह राजाजी के सबध मे ठीक उतरती है। मद्रास में वह अपने ही भाई बधुओ के बीच निश्चित रूप से अप्रिय है तथा १९३७ के कुशल मुख्य मन्त्रित्व के बावजूद सभवत उनकी वहा आवश्यकता नही है। यहा तक कि काग्रेस का उच्च नेता मडल भी जनता को उन्हे इस बार अपना मुख्य मत्री स्वीकार कर लेने के लिए राजी नही कर सका हालांकि उनकी योग्यता और अनुभव ने केन्द्रीय सरकार को उन्हे अपना गवर्नर-

जनरल चुनने के लिए प्रेरित किया था। वास्तव मे यह एक आश्चर्य की बात है कि एक व्यक्ति अपनी आदतो मे इतना सरल, देखने में इतना गम्भीर, अपने व्यक्तिगत सबधो में इतना मनमोहक, स्वभाव से इतना त्यागी तथा विद्वत्ता मे इतना महान् होते हुए भी जनता के कतिपय भागों मे इतनी तीव्र दुर्भावना उत्पन्न कर सकता है। सभवत उनको अच्छी तरह जानने वाले लोग उनके कठोर तर्क को सहन नही कर पाते तथा उनके मस्तिष्क की बारीकियो को पूर्णतया समझने मे असमर्थ रहते है।

अधिकतर अवसरो पर हर एक से उनका मतभेद रहेगा तथा वह किसी का भी बौद्धिक आधिपत्य स्वीकार नही करेंगे यह भली भाति विदित है कि कुछ समय तक गाधीजी भी उनसे निराश हो गए थे किन्तु वह राजाजी को चाहते इतना थे तथा उनके इतने प्रशसक थे कि उनसे छुटकारा पाना महात्माजी के लिए असभव सा था।

वह एक व्यक्ति नही वरन् एक शैली है। तर्क ही उनका मुख्य आधार है, अपने अकाट्य तर्कों से वह अपने विपक्षियो को नीचा दिखा सकते है, तथा लोगो मे विश्वास उत्पन्न कर सकते है, किन्तु कार्य के लिए वह लोगों को उद्यत और अनुप्राणित नही कर सकते। उनकी ज़बान पर कथायें हर समय तैयार रहती है तथा त्रिपुरी मे काग्रेस अधिवेशन के अवसर पर 'फूटी हुई नाव वाली' जो कहानी उन्होने सुनाई थी वह अब तक हमारी स्मृति में मौजूद है। यह ब्राह्मण संत तर्क का एक प्रकाड पडित है, उनकी बौद्धिक सूक्ष्मता अत्यन्त अपूर्व है। कठिन से कठिन तथा अत्यन्त जटिल समस्याओ के लिए उनके पास एक या दूसरा हल हमेशा तैयार रहता है। राजाजी की प्रशसा करते हुए पडित नेहरू ने अपनी जीवन कथा मे लिखा है—"उनकी तीव्र मेधा, स्वार्थहीन चरित्र तथा विश्लेपण की अपूर्व शक्ति हमारे उद्देश्य के लिए बहुत उपयोगी रही है।"

राजाजी का काला चश्मा चर्चिल के सिगार और बाल्डविन के पाइप के समान उनके साथ अत्यन्त घनिष्ठता से सबधित है। इस प्रकार वह

दूसरो की आखो मे देखते है, किन्तु दूसरा कोई एक आध अवसरो पर भी इस बात की तनिक भी जानकारी प्राप्त करने के लिए कि उनका मस्तिष्क किस ढग पर कार्य कर रहा है, उनकी आखो के अदर नही देख सकता। उनके व्यक्तिगत चरित्र के आदर्श बहुत ऊचे तथा वह अत्यन्त सरल एवम् साधारण जीवन व्यतीत करते है। मद्रास के मुख्य मत्री के पद पर होते हुए भी वह अपने कपडे अपने आप धोया करते थे। पता नही कि गवर्नर-जनरल बन जाने पर भी वह अपनी इस आश्चर्यचकित कर देने वाली आदत को ज्यो का त्यो कायम रख सके या नही। उन्होने बहुत विस्तृत अध्ययन किया है तथा साहित्य की दुनिया के लिए उनका अपना अधिकतर समय राजनीति मे लगाना एक निश्चित हानि थी। वह गीता और उपनिषदो के एक अच्छे विद्वान है। उपनिषदो की अपूर्व महानता तथा आधारभूत मानवीयता के विषय में लिखते हुए, उन्होने एक स्थान पर लिखा है।

"विस्तृत कल्पना, विचार का तीव्र आवेग तथा खोज निकालने की विद्रोही प्रवृति के कारण, जिसके द्वारा सत्य की पिपासा से अनुप्राणित हो कर उपनिषद का शिक्षक एवम् उसके शिष्य सृष्टि के अनछिपे रहस्यो का पता लगाते है, ससार की यह सर्व प्राचीन धार्मिक पुस्तक वर्तमान युगमे भी एक आधुनिकतम तथा सबसे अधिक शान्ति प्रदान करन वाली पुस्तक बन गई है"।

"जान गन्थर के शब्दो में "राजगोपालाचारी एक कट्टर ब्राह्मण, अत्यन्त धार्मिक एव एक प्रमाणित विरागी व्यक्ति है। प्रसिद्ध टेनिस विशेषज्ञ जान ट्यूनिस के अतिरिक्त शायद वह ही एक व्यक्ति है, जिन्होने गत वर्ष से पूर्व कभी भी कोई सचल चित्र नही देखा। कुछ मित्रो ने राजाजी को एक मिकी माउस चित्र देखने जाने के लिए राजी कर लिया। ब्राह्मण महाशय के लिए तो सचमुच ही यह एक परेशानी मे डालने वाली बात हो गई थी।

राजाजी की सौम्य मूर्ति से किसी को भी यह आभास नही हो सकता कि अपनी प्रारभिक अवस्था मे उन्होने एक मनुष्य को गोली से मारा था।

गुन्डो के लिए वदनाम सलेम ज़िले के अपने दौरे के सिलसिले मे वे अपने साथ पिस्तौल रक्खा करते थे। किस्सा इस प्रकार है, आधी रात का समय था और राजाजी अपनी हचकोले खाने वाली गाड़ी के अदर झपकियां ले रहे थे। गाड़ी रोक दी गई तथा एक लाल रोगनी गाडी के अदर फेंकी गई। राजाजी चौंक पडे, और वगैर एक क्षण की हिचकिचाहट के उन्होंने मार्ग अवरुद्ध करने वाले पर गोली चला दी। वह वुरी तरह आहत हो गया और तभी राजाजी को यह मालूम हुआ कि जिस व्यक्ति पर उन्होंने गोली चलाई थी वह चुगी का पहरेदार था। वह उसको अस्पताल ले गए किन्तु वडी देर हो चुकी थी। राजाजी अपने ऊपर चलने वाले मुकदमे में छूट गए किन्तु उस क्षण से उन्होने कोई शस्त्र न ग्रहण करने की शपथ खाई।

सन् १९४२ की एप्रिल में इलाहावाद मे होने वाली काग्रेस कार्यकारिणी की वैठक में देश के सामने उपस्थित होने वाले विभिन्न प्रश्नो पर वहुत वाद विवाद हुआ तथा राजाजी का काग्रेस कार्य समिति के अधिकतर सदस्यो के साथ गहरा मतभेद था। उन्होंने कुछ ऐसे वक्तव्य भी दिए थे जिन पर काग्रेस अध्यक्ष ने आपत्ति की थी। राजाजी ने काग्रेस कार्यकारिणी से त्यागपत्र दे दिया, वल्कि उनको ऐसा करने के लिए वाध्य किया गया। निर्णय तो कर लिया गया किन्तु उनके सहकारियो को इस वात का वडा खेद था। काग्रेस कार्य समिति के एक सदस्य जो राजाजी के उद्देश्य की ईमानदारी के प्रति वडा आदर रखते थे, कार्यकारिणी से राजाजी के अलग हो जाने पर रो पड़े थे। दूसरे सदस्य ने कहा था, "हम उनसे सहमत नही हो सकते। उन्होंने हमारे ऊपर एक पहाड सा रख दिया है। वह अपनी तार्किकता को एक अन्तिम सीमा तक ले जा रहे है, किन्तु उनका अभाव हमें खटकेगा"। राजाजी कार्यकारिणी के वाहर चले आए किन्तु वह अस्तव्व तथा शिला की भाति दृढ़ रहे। उन्होने इसको खेल के एक भाग के रूप में ग्रहण किया और उसी रास्ते पर वरावर चलते रहे, जिस पर कि उनको पूरा विश्वास था। वह एक विश्वास रखने वाले व्यक्ति है तथा

विश्वास रखने वाले व्यक्ति अपने रास्ते से कभी डिगने नही, चाहे उसमे कितनी ही कठिनाई क्यो न पैदा हो अथवा चाहे कितना भी तीव्र विरोध क्यो न किया जाय ।

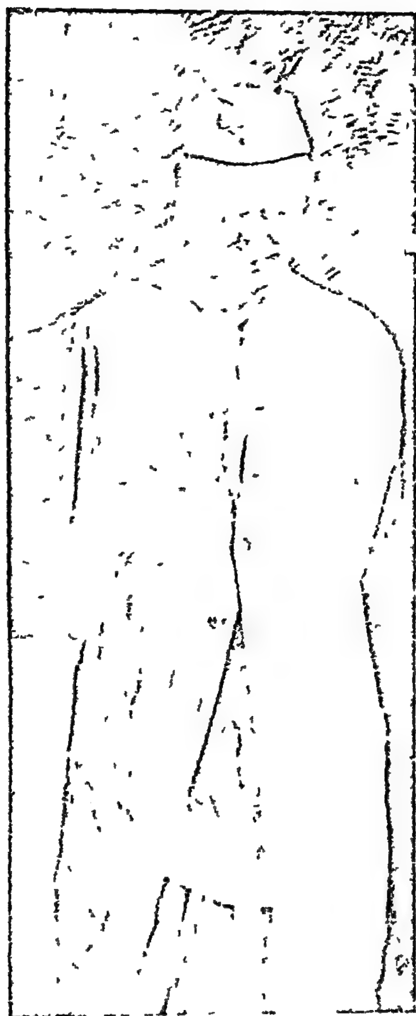
राजाजी का बहुत अधिक समय से काग्रेस के साथ घनिष्ठ सबध रहा है और अपने राजनैतिक जीवन मे उन्होने बहुत से उतार चढाव झेले है । काग्रेस के निर्माण में उन्होने काफी योग दिया है । गवर्नर-जनरल के पद पर उनकी नियुक्ति देश के प्रति उनकी अमूल्य सेवा की जनता द्वारा कृतज्ञतापूर्ण स्वीकृति थी । अपने राजनैतिक विरोधियो के आक्रमणो के बावजूद वह उभर कर फिर ऊपर आ जाते हैं ।

गवर्नर-जनरल के कार्यकाल की समाप्ति के बाद लोगो ने यह अनुभव किया कि उन्हे राजाजी की सेवाओ और सलाह का लाभ प्राप्त न हो सकेगा । ऐसी स्थिति मे अपने निर्बल स्वास्थ्य के बावजूद उन्हे भारत सरकार के गृह विभाग मत्री का पद स्वीकार करना पडा । इस पद मे उन्हे असुविधा हुई । अन्त मे स्वास्थ्य के कारणो से उन्होने इस पद से अवकाश ग्रहण कर लिया । इस बार भी कुछ समाचार पत्रो ने कहा कि राजाजी ने इस बार भी पुन राजनीति मे आने के लिए सन्यास ग्रहण कर लिया है । राजाजी को यह व्याख्या अप्रिय लगी, परतु समाचार पत्रो की धारणा सही निकली क्योकि राजाजी ने मद्रास के मुख्य मत्री पद को ग्रहण कर फिर राजनैतिक क्षेत्र मे प्रवेश किया । सन् १९५० के चुनाव के बाद काग्रेस की स्थिति मद्रास मे इतनी नाजुक हो गई कि यदि राजाजी सहायतार्थ आगे नही आते तो वहा काग्रेस सत्ता सूत्र खो बैठती । मद्रास काग्रेस के उनके प्रतिद्वद्वियो को भी उनके सामने झुकना पडा इनसे उन्हे अवश्य ही असाधारण सतोष प्राप्त हुआ होगा तथा उन्हे अपनी उपयोगिता की अनिवार्यता पर गौरव अनुभव हुआ होगा ।



ठक्कर बापा

अधिकतर ससार के महापुरुषो के लिये शुक्रवार दुर्भाग्य जनक दिवस रहा है। इसी दिन ईसा, कृष्ण, बुद्ध, महात्मा गाधी और सरदार पटेल ने इस ससार को त्यागा। शुक्रवार को ही ठक्कर बापा का देहावसान हुआ। उनके देहावसान से अधिक दुखी होने की आवश्यकता नही है। उनका जीवन साधनाशील और प्रेरक था। उन्होने बडी लम्बी उमर पायी। वह अपने पीछे ऐसा सेवा पुज छोड गये है जो दीर्घ काल तक अविस्मरणीय रहेगा तथा आगामी पीढियो को प्रेरित करता रहेगा। गाधीजी मे सही तरह के लोगो को अपना सहयोगी बनाने और देश सेवा के लिये चुनने का विशेष गुण था। उन्हे ठक्कर बापा के रूप मे सच्चा और निस्वार्थी कार्यकर्ता मिला जो ऐसे सभी कार्यों मे अपनी सेवाये अर्पित करने के लिये तत्पर रहता था, जिनमें इनकी सब से अधिक आवश्यकता थी। गाधीजी हरिजन तथा आदिवासियो से सबद्ध समस्याओ के बारे मे सदैव उनसे सलाह लिया करते थे। जो लोग बापा और बापू को जानते थे उनका कहना था कि बापा महत्वपूर्ण प्रश्नो पर अधिकतर गाधीजी के निर्णयो को गाधीजी पर प्रभाव डाल कर परिवर्तित कराते थे। ऐसा कदाचित ही अन्य व्यक्ति करा सका हो। गाधीजी ने बापा के सम्बन्ध में सन् १९४१ में जो लिखा था वह उल्लेखनीय है। उन्होने लिखा—"तुम दिनोदिन युवक होते जा रहे हो। हरिजनो की सेवा आरम्भ करके तुम अग्रसर होते हुए भीलो, आसामी वन्य जातियो के और संथालो के बापा बन गये हो। तुम्हारे जैसे दानशीलता के सागर को मेरे आशीर्वाद की बूद क्या काम की हो सकती है ? पर चूकि कहावत है कि नन्ही नन्ही बूदो से मिलकर ही सागर बनता है, मै तुम्हे आशी-



ठक्कर बापा

र्वाद देता हू जिमका तुम जैसा चाहो वैसा उपयोग कर सकते हो।'

ठक्कर वापा ने पूना के एक महाविद्यालय में सन् १८८६ में विज्ञान का अध्ययन आरम्भ किया। उन दिनो कोई छात्रावास नही था तथा उन्हे और उनके साथियो को भोजन व्यवस्था स्वय करनी पड़ी। उनके साथी उन्हे प्रेम करते तथा सम्मानपूर्ण दृष्टि से देखते थे। उन्होने आरम्भिक दिनो में वम्बई राज्य में इजीनियर के रूप में कार्य किया, सन् १८९९-१९०२ में अफ्रीका मे भी इजीनियर के रूप में कार्य किया।

भारतीय ससद के सदस्य के रूप मे उन्हे यह देखकर दुःख हुआ कि कुछ लोग हिन्दू-सहिता विधेयक के विरुद्ध थे। उन्होने कहा था—"मुझे यह कहते सकोच होता है कि हमने पिछले साठ वर्षों में कोई बडी प्रगति नही की है। लोग और जनता उतने ही कट्टरपथी तथा अप्रगतिशील है जितने पुराने समय मे थे। अब भी अनेक शास्त्री और आचार्य विधेयक के कुछ अशो के विरुद्ध आन्दोलन कर रहे है। भारतीय विधान सभा में कुछ लोग विधेयक की कुछ पुष्ट आधारो पर तलाक दे सकने सम्बन्धी धाराओ के भी विरुद्ध है। मै यह कहे बिना नही रह सकता कि एक-पत्नी-विवाह हिन्दू सामाजिक जीवन का प्रथम सिद्धान्त होना चाहिये। यदि ऐसा नही होता तो भारत ससार के अन्य राष्ट्रो के साथ समता के आधार पर खडा नही हो सकता।" अनेक मामलो में इस वयोवृद्ध समाज सुधारक के उन युवक राजनीतिज्ञो और विधायको से, जो आधुनिक तथा प्रगतिशील होने का दावा करते है, कही अधिक प्रगतिशील विचार थे।

ठक्कर वापा राजनेता नही थे। वह महान् समाज सुधारक थे। उन्होने भारतीय समाज के लिये प्रशसनीय कार्य किया था। जब वापू पीडित जनता की पीडा को कम करने के लिये नोआखाली गये तो वापा भी उनके साथ गये तथा वहा उन्होने ठोस कार्य किया। वह जनता को ढाढस वधाने के लिये घर घर निर्भय तथा निरस्त्र गये, पुलिस और सेना से कोई सहायता नही ली। उन्होने इस सुझाव को भी पसद

नहीं किया कि कोई अंगरक्षक उनके साथ रहे। वह अपने स्वय अगरक्षक थे तथा केवल परमात्मा ही उनका रक्षक था। गाधीजी को नोआखाली मे उनके साहस तथा दुखी जनता के लिये किये गये कार्य को देख कर आश्चर्य हुआ। उन दिनो नोआखाली पहुचे लोगो के वारे मे वहुत कुछ कहा तथा लिखा गया था; परन्तु वापा प्रकाशन की चकाचौंध से दूर रहे। उन्होने शातिपूर्वक और धैर्यपूर्वक शाति तथा सद्भावना के दूत के समान जनता मे कार्य किया। उसे आशा और उत्साह का सदेश दिया। गाधीजी ने एक वार कहा, "ठक्कर वापा अलभ्य कार्यकर्त्ता है। वह सरल प्रकृति है तथा प्रशसा नही चाहते। कार्य ही से उनको एकमात्र संतोष मिलता तथा मनोरजन होता है। वृद्धावस्था से उनके उत्साह में शिथिलता नही आई है। वह स्वय एक संस्था है। यात्राकाल मे जव मै उनकी कार्यपद्धति देखता हू तो मुझे उनसे ईर्षा होने लगती है। हम दोनो की लगभग समान अवस्था है; परन्तु उन्हे तो शारीरिक आराम की विलकुल फिक्र ही नही है। उनका जीवन सच्ची सेवा का आदर्श प्रस्तुत करता है तथा हमे उस आदर्श का पालन करना चाहिये। यदि हम जन जातियो और आदिवासियो के लोगो को अपने ही लोग मानना चाहते है तो ऐसा केवल वापा के जीवन के अनुगमन से ही किया जा सकता है। उनकी सदैव यह तीव्र आकांक्षा रही है कि वह जरूरतमदो तथा दुखियों से घुले मिले। उनसे दूर होते ही उन्हे दुख होता है। जनता में रहना ही उन्हे इष्ट हो गया है। वही उनके देवता और उनकी सेवा ही उनका जीवनाधार है।"

भारत मे न तो राजनेता और न दूसरे लोग ही कार्यक्षम है, पर वापा मे वडी कार्यक्षमता तथा कार्यतत्परता थी। कार्यपालन के लिये उनमे असाधारण धुन थी। वृद्धावस्था मे भी जव कि उनकी दृष्टि कमजोर हो चली थी, वह हर रात अपनी दैनिकी (डायरी) लिखाते तथा दूसरे कार्य करते थे। वह कार्य से थकते नही थे। उन्हे कार्य करने

मे ही आनन्द आता था। वह शीघ्र परिणाम पाने के लिये जल्दबाज़ी नही करते थे। उनका आदिम जाति सेवक सघ ने सबध था। वह इनके कार्य में जुटे रहते थे। यद्यपि वह यह जानते थे कि उनके श्रम का फल उनके जीवन-काल मे प्राप्त न हो सकेगा, फिर भी इससे उनके कार्य मे शिथिलता नही आती थी। एक बार उन्होंने कहा था, "जब तक विषमताहीन, जातिहीन समाज स्थापित नही होता तब तक सघर्ष जारी रहना चाहिये।" आदिम जाति के लिये कार्य के प्रति बापा के प्रेम के सम्बन्ध में श्री प्यारेलाल ने लिखा, "उन्हे यह भ्रम नही था, कि उनका सपना उनके जीवन-काल मे सच्चा हो जायगा, फिर भी इससे उनके उत्साह और उनकी लगन मे कमी नही आती, क्योंकि वह जानते है कि कार्य करने में ही पुरस्कार मिल जाता है। दुखियो और पीडितो के कष्टो को कम करने मे ही उन्हे सतोष है तथा यही उनके लिये प्रतिदान है।"

ठक्कर बापा के हृदय में कटुता को कोई स्थान नही था। उनमे सदैव दूसरो के लिये प्रेम का सागर लहराता रहता था। उनके मन मे अग्रेजो के प्रति तक कटुता नही थी, जिन्होने भारतीय जनता पर जुल्म ढाये थे। उन्हे सचमुच में यह विश्वास नही था कि ब्रिटिश सरकार भारत को इतने जल्दी स्वतत्र कर देगी। उन्होने कहा था—"मैंने परमात्मा को धन्यवाद दिया और ब्रिटिश मजदूर सरकार के प्रधान मत्री श्री क्लीमेंट एटली को आशीर्वाद दिया कि उन्होने हमें स्वतत्रता प्रदान करने का साहस-पूर्ण कदम उठाया।" उनका खयाल था कि लार्ड रिपन और लार्ड कर्ज़न ने भारत को महानता प्राप्त करने में सहायता की थी। वह बडे स्नेह से दादाभाई नौरोजी, गोपाल कृष्ण गोखले, बाल गगाधर तिलक, सलेम के० सी० विजयराघवाचार्य और निस्सदेह गाधीजी की देश सेवाओ का स्मरण किया करते थे, जिन्होने भारत को महान और गौरवशाली बनाने मे योगदान किया।

हरिजन समाज के प्रति ठक्कर बापा की सेवाओं को कदापि भुलाया

नही जा सकता । एक वार वापा ने हरिजन सेवक सघ के मत्रित्व से प
त्याग करना चाहा क्योंकि वह अपना पूरा समय आदिम जातियो व
सेवाओं में लगाना चाहते थे । उन्होंने उक्त पद से मुक्त होने के लि
गाधीजी की अनुमति मागी । उनके पत्र का उत्तर देते हुए गाधीजी
लिखा—"तुम्हारा लोभ असीम है । तुम इसकी मन भर कर ज़रूर पू
करो । हरिजन सेवक संघ का मत्रिपद तुम्हारे रास्ते मे आडे नही आयगा
तुमने सघ का दायित्व सभाला है । केवल मृत्यु ही तुम्हे इससे मुक्त क
सकती है . ... तुम सघ के मत्रिपद के दायित्वो का निर्वाह क
हुए आदिवासियो को जितना समय दे सको दे सकते हो । तुम्हारा य
अभिप्राय कभी नही हो सकता कि इतनी रियायत के वावजूद तुम प
त्याग करना चाहते हो । तुम अपनी सेवाए आदिवासियो के लिये अर्पि
करो, इसमें तो मुझे कोई आपत्ति नही है; पर यह कार्य हरिजनो का बलि
दान करके नही होना चाहिये ।"

वह असीम सेवाभावी थे । कार्य मे डूवे रहते थे । आरा
को हराम समझते थे, आशावादी थे तथा स्थिति के प्रकाशवा
पहलू को ही देखते थे । उनमें प्राप्त अवसरो का सदुपयोग करने क
असाधारण क्षमता थी । वह सरल प्रकृति तथा गाधीजी के समान विन
थे । ठक्कर वापा अल्प ज्ञात और अल्प विज्ञापित उद्देश्यो में दीर्घ आस्थ
रखने तथा उनकी पूर्ति के लिये मन, वचन और कर्म से जुट जाने के कार
महान थे । वह असाधारण रूप से उपयोगी थे । वह मानवता के उ
अलभ्य सेवको मे से थे जो अपना ढोल पीटे विना भी उच्च आदर्श थे





नरेन्द्र देव

आचार्य नरेन्द्रदेव

राजनीति मे रहने पर यह बहुत ही स्वाभाविक है कि आपके ५ भी कई बन जायगे। दुश्मनो का न होना एक ऐसा सौभाग्य है जो बहुत लोगो को प्राप्त होता है। आचार्य नरेन्द्रदेव ऐसे लोगो मे से एक है। यह मनीषी तथा योग्य राजनीतिज्ञ न केवल उन लोगो के आदर का भाजन है जो उनकी राजनीति से सहमत है, बल्कि उनसे असहमत रहने वाले लोग भी उनका सम्मान करते है। वे राजनीति को व्यक्तिगत सबध के साथ हस्तक्षेप नही करने देते और काग्रेस मे भी उनके प्रशसको तथा मित्रो की बहुत बडी सख्या है जो कभी उनके विरुद्ध एक भी कटु वचन का उच्चारण नही करते। पडित जवाहरलाल नेहरू भी नरेन्द्रदेव के प्रति बहुत आदर तथा प्रेम रखते है और जब कभी उन्हे यह पता चलता है कि आचार्य जी दिल्ली आए हुए है तो वह उनसे मुलाकात करना चाहते है और अक्सर अपने साथ रहने के लिए आमन्त्रित करते है। पडित नेहरू के ही अनुरोध से नरेन्द्रदेव इस बात पर राजी हुए कि सरकारी दल के साथ चीन जावे। उनके कुछ मित्र अधिक प्रसन्न तब होते जब आचार्यजी उस दल मे सम्मिलित होकर उसका सम्मान बढाने से इन्कार कर देते। "आप चीन सरकारी दल के साथ जाने के लिए राजी क्यो हो गए ? आपके दल के कई सदस्यो को यह बात अच्छी नही लगी," कुछ मित्रो ने उनसे कहा। एक सहृदय मुस्कुराहट के साथ उन्होने कहा, "आप जानते ही है, मैं मना कर ही नही पाया, क्योकि कुछ पुराने मित्रो का मुझ पर दबाव पडा"। किसी के अनुरोध का उत्तर "नही" कह कर देना उन्हे बहुत नापसद है और यही उनकी सबलता है और यही उनकी निर्बलता भी है। वह इतने विशाल हृदय है और इतने उदार और कृपालु है कि सदा दूसरो का उपकार ही करने

की सोचते है। कुछ मित्र इसे उनकी कमज़ोरी का चिन्ह समझते है, पर आचार्यजी यह पसद करते है कि खुद कमज़ोर रहे पर दूसरो का उपकार करते चले। उनसे यह नही होता कि दूसरो को "नही" कह कर निराश कर दे। आचार्य नरेन्द्रदेव शुद्धता और आचार के साथ रहते है, अपने व्यवहार मे नम्र और दूसरो का खेयाल रखने वाले है, आत्मीयता और मित्रता मे उदार तथा सहृदय है और नेतृत्व मे एक चतुर, हितकर राय देने वाले तथा आधुनिक विचारो के पोषक है।

जब कभी एक ऐसे आदमी की आवश्यकता पड़ती है जो, राजनीति में अथवा शिक्षा मे निष्पक्षतापूर्वक ईमानदारी से काम कर सके तो अक्सर आचार्य नरेन्द्रदेव का नाम ऐसे अवसरो पर लिया जाता है। काग्रेस के साथ उनका राजनीतिक मतभेद रहते हुए भी कई बडे काग्रेस के पदाधिकारियो ने उनसे लखनऊ विश्वविद्यालय का उपकुलपति (वाईस चान्सलर) बनने का बहुत अनुरोध किया और मुझे यह मालूम है कि किस प्रकार दिल्ली से बाद में उनको बनारस का उप-कुलपति बनने के लिए बाध्य किया गया। उनके विपक्षी भी उनका विश्वास करते है क्योकि वे जानते है कि वे कभी कोई ऐसा काम नही करेंगे जो अनुचित या सम्मान के विरुद्ध होगा। कई काग्रेस के नेताओ ने उनसे इन विश्वविद्यालयो का उप-कुलपति पद को स्वीकार करने के लिए कहा क्योकि वे जानते थे कि आचार्य जी अपने पद से कोई व्यक्तिगत लाभ नही उठायेगे और कभी भी छात्रों को काग्रेस अथवा सरकार के विरुद्ध कोई काम करने के लिए नही भडकाये। यह आशा की जाती थी कि उनके विपक्षी दल में रहने पर भी विश्वविद्यालयो का नैतिक स्तर ऊचा उठ जायगा। ऐसा हुआ भी। नरेन्द्रदेव के समय मे लखनऊ विश्वविद्यालय के छात्रों ने बहुत शिष्ट और सयत व्यवहार किया, क्योकि वे सदा इस बात का खयाल रखते थे कि कही आचार्य नरेन्द्रदेव की भावनाओ को धक्का न लगे। जब कभी उन्हे कोई उत्पात करना होता था, वे सदा यह सोचते थे कि इस बारे मे आचार्य

नरेन्द्रदेव का क्या सोचेंगे। उनका सम्मान अध्यापक और
करते है।

नरेन्द्रदेव के राजनीति मे चले जाने से विद्वानो की दुनिया को बडी क्षति पहुची है। वह स्वभावत मनीषी हैं। जब वह पढाते पढते होते है तो बहुत प्रसन्न रहते है। वह एक उच्च विचारक है और पेशेवर अध्यापको मे जो पाखडीपन होता है उनमे वह कोसो दूर है विद्वत्ता के भार को अपने सर पर फूल की तरह धारण करने पर उन्हे कभी यह गुमान नही हुआ कि उन्हे "बहुत कुछ" आता है। वह सदा सीखने के लिए प्रस्तुत रहते है और अपने विद्यार्थियो से भी कुछ न कुछ सीख लेते है। उनकी आखे चमकती है, चेहरे पर मुस्कुराहट खेलती रहती है और जब कोई व्यक्ति गम्भीरतापूर्वक विचारणीय बात कहता है तो वह ध्यानपूर्वक उसे सुनते है। वह एक अच्छे बातचीत करने वाले और धैर्यपूर्ण श्रोता हैं। उनकी सगति मे आपको कभी उनकी विद्वत्ता का आतक नही सतायेगा। कभी आपको ऐसा अनुभव नही होने देते कि वह बहुत पढे लिखे है और उनके चारो तरफ जो लोग है वह निरे कोरे है। अपने सामने वह तुच्छ और छोटे मे छोटे को भी ऐसा अनुभव कराते है कि उसे घबराहट नही होती। साधारण शिष्टाचार के प्रति उनकी अत्यधिक अभिरुचि है। वह बहुत शिष्ट है, ऐसे व्यक्ति बहुधा नही मिलते।

वह गम्भीर विचारक है, पैठने वाले वक्ता है, विज्ञ भाषाविद है, भारत मे समाजवाद के सर्व श्रेष्ठ प्रचारक आचार्य नरेन्द्रदेव बुद्धिवादियो के बीच बुद्धिवादी है और देश भक्त मे अग्रगण्य है। उनके प्रशसक और आलोचक आपस मे बहस करेगे कि स्वतनता सग्राम का यह सेनानी जिसने सौ युद्धो मे भाग लिया है, यदि सरस्वती का ही पुजारी रहता और सस्कृति के क्षेत्र मे देश की सेवा करता तो राजनीति के धूल भरे अखाडे से ज्यादा अच्छी शोभा का पात्र होता कि नही, पर इस बात पर किसी को आपत्ति

नही होगी कि आचार्यजी ने अपने राजनैतिक जीवन मे एक उच्च आदर्श का प्रयोग करके उसको अधिक रुचिकर वनाया है।

जव अपने समाजवादी साथियो को लेकर वह काग्रेस से अलग हो गए तो उत्तर प्रदेश में आचार्यजी के काग्रेस से वाहर् निकलने पर वडा व्यापक खेद लोगो को हुआ। उस समय उत्तर प्रदेश के प्रान्तीय काग्रेस के मत्री ने उनको एक पत्र लिखकर उनसे प्रार्थना की कि अपने इस निर्णय को दुहरा ले और काग्रेस को न छोडे। आचार्यजी ने जो उत्तर भेजा, वह वहुत गानदार था। उन्होने कहा, "एक ऐसे समय में जव हम लोगो से यह कहा जा रहा है कि हमारे इरादे गडवड है और हम कांग्रेस में फूट फैलाना चाहते है, और जव कुछ सामर्थ्यवान उच्च पदाधिकारी यह धमकी देते है कि हमको नष्ट भ्रष्ट कर देंगे, यह प्रसन्नता का विपय है कि इस प्रांत के काग्रेस के सवसे वडे कार्यकर्त्ता तो हमारे उन इरादो को समझते है जिनके कारण हमने यह कदम उठाया है।

"मै इन अच्छी भावनाओ का सम्मान करता हू और प्रातीय समिति ने जो हमारे लिए सद्भावना दिखाई है उसके लिए हार्दिक धन्यवाद देता हू। हमारे लिए यह और भी अधिक खुशी की वात होती, यदि हमारे लिए यह सम्भव होता कि हम उनके आह्वान को स्वीकार कर सकते और काग्रेस में वापस जा सकते।

"नम्रता के साथ मुझे यह कहना पड रहा है कि इस समय जो परिस्थिति है उसमे हम दोनो के लिए यही अच्छा है कि जो कुछ हो चुका है उसे अंगीकार करे। अपने मित्रो के इस वापस चले आने के आग्रह को स्वीकार नही कर सकते है, यह देखकर मुझे वेदना होती है। फिर भी मै प्रार्थना करता हू कि आपका मुझ पर जो प्रेम है उसका प्रयोग हमारे इरादों को कमज़ोर करने के लिए मत कीजिए, वल्कि उस प्रेम का प्रभाव यह पडना चाहिए कि हम उस रास्ते पर सीधे चल सकें जो हमने अपने लिए चुना है।

"यह जानकर मुझे वहुत गान्ति मिलती है कि इस अन्यायपूर्ण और

निर्दय ससार मे हमारे पुराने काग्रेस मित्र ऐसे है जो हमारे निर्णय को सही नही समझते, पर हमको उदारतापूर्वक समझने की कोशिश करते है और हमारी भूतपूर्व सेवाओ को अगीकार करते है।"

नरेन्द्रदेव इस देश के वक्ताओ मे एक सर्व श्रेष्ठ हिन्दी, उर्दू और अग्रेजी के वक्ता है। उनकी धारा प्रवाह शैली बहुत ही प्रभावशाली है। उनके भाषणो को भारी बनाने में केवल भावना का ही प्रयोग नही होता, बल्कि गहरी विद्वत्ता का भी उनमे समावेश होता है। वह अपने श्रोताओ को मुग्ध कर लेते है और उनके भाषण का स्तर सदा ऊचा रहता है। उनके भाषण के अन्त मे सदा लोगो ने यह पूछा, "क्या आप यह स्वीकार नही करते कि वह बहुत अच्छे वक्ता और बहुत जानकार व्यक्ति है ?" किसी भी विद्वानो की सभा में वह अपना पद प्रतिष्ठित रख सकते है।

कार्तिक शुक्ल अष्टमी, सवत् १९४६, सन् १८८९ को सीतापुर के एक मध्यम वर्ग के खत्री परिवार मे आचार्य नरेन्द्रदेव का जन्म हुआ। बचपन में वह गीता और अमरकोष कठस्थ रखते थे। वह तिलक के प्रशसक थे और दस वर्ष की अवस्था मे काग्रेस का अधिवेशन देखने के लिए गए। उस समय भाषण अग्रेजी में होते थे और उनकी समझ मे बहुत कम आया, फिर भी वह वाद विवाद को सुनते ही रहे। वह म्योर सेन्ट्रल कालेज के छात्र थे और अपनी शिक्षा समाप्त करने पर उन्होने फैजाबाद मे वकालत की। अपनी युवावस्था मे उन्होने भी विलायत जाकर आई० सी० एस० (इडियन सिविल सर्विस) की परीक्षा देने की भी सोची थी, पर उनकी माता को विदेश गमन का विचार अच्छा नही लगा। करीब पाच साल तक उन्होने वकालत की होगी कि वह असहयोग आन्दोलन मे कूद पडे और उस समय से उन्हे कई बार जेल यात्रा करनी पडी। सन् १९४२ में वह काग्रेस के कार्यकारिणी के सदस्यो के साथ अहमदनगर किले मे कैद थे, जहा उन्होने कुछ विद्वत्तापूर्ण ग्रन्थ लिखे।

सन् १९२१ मे मित्रो के दबाव के कारण विशेषतया जवाहरलालजी

के कारण उन्होंने काशी विद्यापीठ मे प्रवेश किया। काशी विद्यापीठ देश भक्ति की परम्पराओ पर सचालित एक राष्ट्रीय सस्था थी। पाच वर्षो के बाद वह उसके प्रधान अध्यापक हो गए और उनको आचार्य का पद मिला। नरेन्द्रदेव के पिता बाबू बलदेवप्रसाद एक सफल वकील थे और उन्हे इस बात की उत्कट इच्छा थी कि उनका पुत्र भी वकालत करे, पर नरेन्द्रदेव भारतीय राजनीति के गहरे समुद्र में कूद पड़े और उन्हे अपने पेशे के लिए समय ही नही मिलता था। वह शिल्प कला विज्ञान के विशेषज्ञ बनना चाहते थे, पर सन् १६१३ में जब उन्होंने एम० ए० पास किया तो उन्हें पता चला कि वह ऐसा नही कर सकते। सन् १६१५ में उन्होंने होम रूल लीग की फैजाबाद शाखा का मत्री पद स्वीकार किया। सन् १६०६ मे वह दर्शक बनकर कलकत्ता काग्रेस के अधिवेशन मे गए। वहा उन्होंने अरविन्द घोष और विपिन चन्द्र पाल के भाषण सुने। श्रीअरविन्द ने नए दल के विधान पर अपना प्रसिद्ध भाषण दिया था। सन् १६१० में जब काग्रेस का अधिवेशन इलाहाबाद में हुआ तो उसे सुनने के लिए वह नही गए, यद्यपि वह इलाहाबाद ही में एक विद्यार्थी थे, कारण यह था कि काग्रेस से उग्रवादी लोगो को निकाल दिया गया था।

नरेन्द्रदेव सदा अच्छे छात्र थे। "मेम्बायर आफ ए रिवोल्युशनरी", क्रोपोटकिन की "म्युचुअल एड" और लेख, ए० के० कुमारस्वामी का "नेशनल आइडीयलिज्म", अरविन्द घोष के लेख, हर दयाल की पुस्तकें, तुर्गनेव की कहानिया, गैरीबाल्डी का जीवन चरित्र, मैज़िनी के लेख, फ्रान्स की क्रान्ति पर पुस्तके, ब्लाट्सशेलि की 'थिअरी आफ स्टेट' और रूस का बहुत सा निहिलिस्ट साहित्य उन्होने अच्छी तरह पढा। वह गोविन्द-वल्लभ पन्त, कैलाश नाथ काटजू, शिव प्रसाद गुप्त और ठाकुर छेदी-लाल के सहयोगी थे।

जब अखिल भारतीय काग्रेस समाजवादी दल की स्थापना हुई तो

पटना अधिवेशन में उन्होने सभापतित्व किया। तब से वह समाजवादी दल के दिशा निर्णायक रहे हैं। पटना अधिवेशन में उनका भाषण बहुत विद्वत्तापूर्ण था और उसने बडी हलचल पैदा की। कई वर्षों तक वह किसान नेता थे और किसानो के लिए उत्तर प्रदेश में बहुत काम किया। अखिल भारतवर्षीय किसान सभा के दो बार वह अध्यक्ष बनाए गए और गया तथा बेदुअल में १९३९ और १९४७ में उन्होंने सभापतित्व किया।

नरेन्द्रदेव को गाधीजी बहुत चाहते थे। एक बार उन्होंने कांग्रेस के अध्यक्ष बनने के लिए उनका नाम भी लिया, पर कार्यकारिणी समिति ने उस प्रस्ताव को स्वीकार नही किया। सुभाषचन्द्र बोस ने भी नरेन्द्रदेव से अपनी कार्यकारिणी का सदस्य बनने की प्रार्थना की जब कि वह कुछ अन्य काग्रेसी सहयोगियो के खिलाफ थे। सन् १९४७ में गांधीजी ने नरेन्द्रदेव के दमा का इलाज किया और वह करीब-करीब अच्छे हो गए थे। उन दिनो मे गाधीजी और नरेन्द्रदेव एक दूसरे के निकट सम्पर्क में आए और दोनो ने एक दूसरे का बहुत सम्मान किया।

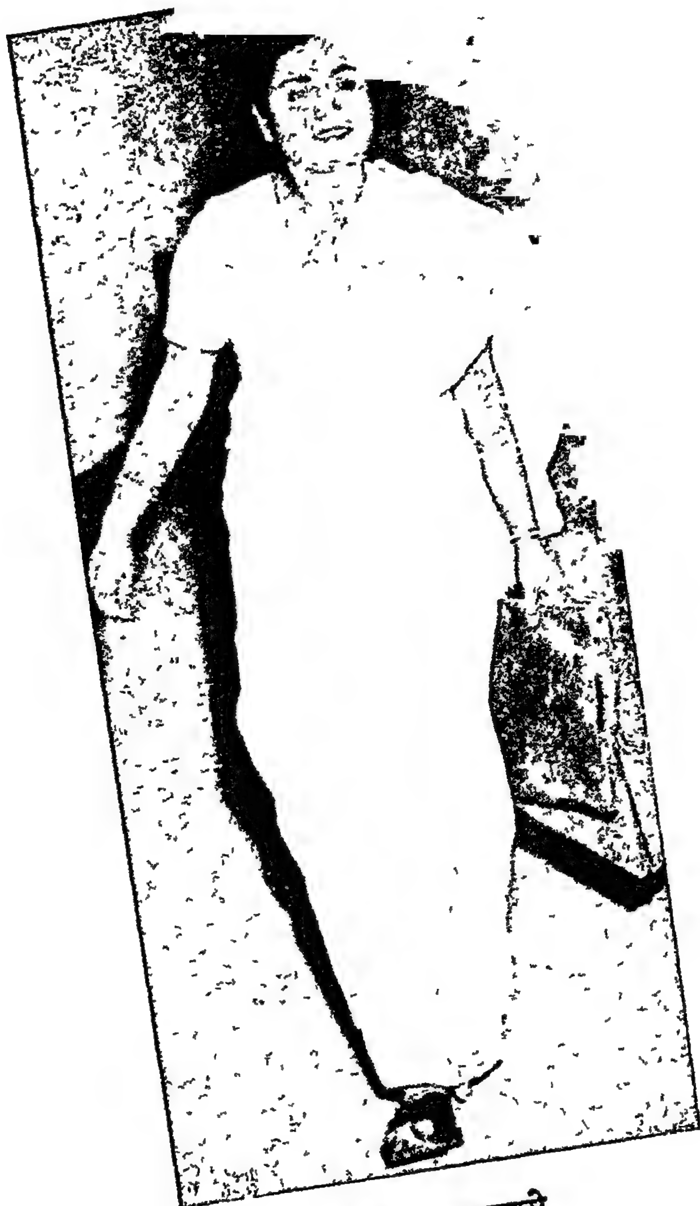
आचार्य नरेन्द्रदेव को श्रद्धाजलि देते हुए एक बार महात्माजी ने ठीक ही कहा—

"उनका दिल को खीच लेने वाला आचरण, उनकी निष्कपट पर महान् विद्वत्ता, उनके चरित्र तथा विचारो की सुदृढ़ता ने उन्हें हजारों का प्रेम-भाजन बना लिया है। उनका उदाहरण उस व्यक्ति का उदाहरण है जो आदर्श के लिए जीवित रहता है और जिसका एक विश्वास या आस्था है कि समाज वर्गहीन बन जायगा जहा गरीबी, अज्ञानता और शोषण नहीं रहेगा, उनकी आस्था आम जनता पर है कि उसमें क्रान्ति करने और नए समाज का निर्माण करने की शक्ति है और इस तरह नए समाज का निर्माण हो सकता है। अपने जीवन को वह इतनी पवित्रता के साथ ध्येय की पूर्ति के लिए चलाते है और उसमे इतनी आत्मिक सुदृढ़ता है कि जो भी उनके

सम्पर्क में आता है, वही महान बनने लगता है और इससे राजनीतिक जीवन में एक नया स्तर उपस्थित होता है ।"

नरेन्द्रदेव उन सुसंस्कृत और शिष्ट व्यक्तियों में है जिनकी संगति मे ख्याति प्राप्त विद्वान और राजनीतिज्ञ लोग रहना पसद करते है। नम्रता उनमे कूट-कूट कर भरी हुई है और अपने को जोर देकर वह कभी दूसरे पर नही लादते। उनका मृदु स्वभाव और सुमधुर शील, उनके व्यक्तित्व मे एक सूक्ष्म सौन्दर्य ला देता है।





कपालानी

सुचिता कृपालानी

कई वर्ष पहले, एक दिन सायकाल एक महिला एक तीक्ष्ण और स्पष्ट रेखाये अकित मुद्रावाले सज्जन के साथ मेरे एक मित्र से मिलने आयी। ज्योही वे बैठक में प्रविष्ट हुए त्योही सभी उनका स्वागत करने के लिए उठ खडे हुए। कुछ क्षणो के लिए शान्ति छा गयी। इसके बाद महिला ने व्यगपूर्वक कहा, "मेरे पति कल विश्वविद्यालय मे भाषण करेंगे और वामपक्षीय राजनीति के बारे में कुछ कहेंगे।" उनके इन शब्दो से मुझे कुछ धक्का लगा और मै वामपक्षीय नेताओ के समर्थन में कुछ तर्क उपस्थित करने लगा। मेरी बातो से महिला के साथ आए सज्जन कुछ भडक पडे। उन्होंने तीन चार वाक् प्रहार किए जिससे मै अवाक् तथा कुछ उदास हो गया। मैंने अपने मित्रो से धीरे से पूछा—"ये कौन थे ?" उन्होंने बताया कि ये आचार्य कृपालानी थे और उनके साथ श्रीमती कृपालानी थी। सुचिता देवी बडी मधुरता से कई बाते करती रही। वह बडी सरलता और सुदरता से अग्रेज़ी बोल रही थी। इस बार आचार्य खूब सिगरेट पी रहे थे या हम पर उपेक्षा का धुआ छोड रहे थे। उस दिन के बाद मेरी उनसे अधिकतर भेंट होती थी। मेरा उनसे ज्यो-ज्यो परिचय बढता गया त्यो-त्यो उनके प्रति स्नेह बढता गया।

सुचिता देवी सरल प्रकृति महिला है। उनमे ढकोसलापन नाम मात्र को नही है। वह सन् १९४१ मे गिरफ्तार कर ली गई तथा उन्हे एक साल की कैद की सजा हुई। जो महिलाये उनके साथ जेल मे थी उनका कहना था कि जेल मे उनसे अधिक अच्छा और दयालु साथी मिलना कठिन था। वह जेल से बाहर मुश्किल से कुछ महीने रही थी कि सन् १९४२ का स्वतन्त्रता सग्राम छिड गया तथा उन्हे ब्रिटिश सरकार के विरुद्ध आन्दोलन

चलाने के लिए भूमिगत हो जाना पडा । वहुत दिनो तक वह पुलिस को चकमा देती रही तथा गिरफ्तारी से वची रही, परतु आखिर एक दिन एक आई० सी० एस० (इडियन सिविल सर्विस) अफसर जो उनका चचेरा भाई था, के निवास स्थान पर गिरफ्तार कर ली गई। वह लखनऊ जेल लाई गई। यहां खुफिया पुलिस के अफसरो ने उनसे कुछ सूचना पाने के लिए उन्हे कई दिन तक परेशान किया। वह कुछ दिन विलकुल एकाकी रखी गईं तथा उन्हे लखनऊ जेल मे कष्टमय दिन व्यतीत करने पड़े।

सुचिता देवी गाधीजी का मनोयोगपूर्वक अनुगमन करती थी। उन्होने कस्तूरवा स्मारक ट्रस्ट का वहुत सा कार्य किया। एक दिन मैंने उनसे पूछा—"क्या आप इस तरह के काम से ऊवती नही हैं ?" उन्होने कहा—"मै जानती हू कि इस तरह का कार्य कठोर है तथा इसमें कोई आकर्पण नही है; पर क्या उच्च उद्देश्य की पूर्ति के लिए यह कार्य स्वय ही पुरस्कार नही है ?"

सुचिता देवी ने सन् १९३० में दिल्ली के सेट स्टीफेस कालिज से एम० ए० परीक्षा उत्तीर्ण की। उसी वर्प उनके पिता का देहात हो गया तथा परिवार के भरणपोषण का भार उन पर आ पड़ा। उन्होने कुछ समय तक लाहौर के गंगाराम स्कूल मे अध्यापन कार्य किया और वाद मे वनारस हिन्दू विश्वविद्यालय मे इतिहास की अध्यापिका नियुक्त हो गईं। उन्होने सन् १९३४मे विहार भूकम्प पीडितो के सहायतार्थ आचार्य कृपालानी के साथ कार्य किया। उनका आचार्य कृपालानी के साथ सन् १९३६ में विवाह हुआ। वह सन् १९३९ मे अखिल भारतीय काग्रेस कमेटी के महिला विभाग की मत्री नियुक्त हुईं। सन् १९४३ में उन्होंने कस्तूरवा स्मारक ट्रस्ट का कार्य भार सम्हाला। वह इसकी सगठन मत्री थीं।

सुचिता देवी राजनीतिक नेत्री हैं पर वह राजनीति में डूबी नही रहती। वह विश्राम के लिए इससे मुक्त हो सकती है। वह मधुरता से गाती हैं।

वह अधिकतर गाधीजी की प्रार्थना सभा मे भजन गाती थी। अपनी स्वाभाविक सरलता के कारण वह अधिकाश लोगो मे जल्दी घुल मिल जाती है। वह उच्च शिक्षित तथा सुसस्कृत मडलियो मे सम्मान प्राप्त कर लेती है तथा अशिक्षितो और जन साधारण मे भी स्नेह अर्जित कर लेती है। उन्हे उच्च राजनीतिक चर्चा करने मे आनद आता है। राजनीतिक गति विधियो से प्रेम है। पर यदि आवश्यकतावश उन्हे घर के चौके मे काम करना पडे तो वह कोई असुविधा अनुभव नही करती। घरेलू काम मे उन्हे उतना ही आनद आता है जितना राजनीतिक भाषण देने में। वह अपने पति के राजनीतिक कार्यो मे अपना सहयोग देती है। उनके लिए कपडे भी सी देती है।

मैंने अनेक विश्वसनीय सूत्रो से सुना है कि सुचिता देवी गाधीजी की कृपा पात्र और विश्वास पात्र थी। गाधीजी के कृपा पात्रो का भाग्य सदैव ईर्षा योग्य नही है। उन्हे अधिकतर उच्च पदो मे दूर रहना पडता था। उन्हे मुश्किल से प्रकाशन-प्रसिद्धि प्राप्त होती थी। एक बार एक काग्रेस नेता ने गाधीजी से कहा कि आप राजेन्द्र बाबू से अत्यधिक कार्य कराते है। कहा जाता है कि गाधीजी ने उसे उत्तर दिया—"क्या तुम यह नही जानते कि मै उन पर विश्वास करता हू तथा उन्हे उत्तरदायित्व-पूर्ण पदो के लिए दीक्षित करना चाहता हू।" यदि गाधीजी का अपने लोगो को दीक्षित करने का यही तरीका था तो उन्होने सुचिता देवी को भी महान उत्तरदायित्वपूर्ण कार्यो के लिए दीक्षित किया था। सुचिता देवी अपनी ईमानदारी, योग्यता और सचाई के कारण गाधीजी की बडी विश्वास पात्र थी।

एक महान् राजनेता तथा असाधारण बौद्धिक की पत्नी होने के नाते उन्हे एक कठिन व्यक्ति के साथ निर्वाह करना पडता है जिसके रहने और सोचने का तरीका जन साधारण से भिन्न है। जब उनका कृपालानी के साथ विवाह हुआ तब वह (कृपालानी) सामान्य आरामो के प्रति नितात

उदासीन थे। सुचिता देवी की प्रशसा मे यह अवश्य उल्लेखनीय है कि उन्होंने इन कुछ वर्षो मे आचार्य को गृहस्थी के कुछ आरामो से उनकी उदासीनता के वावजूद, अवगत करा दिया है।

सुचिता देवी ने पूर्वी वगाल मे नोआखाली में जो कार्य किया उससे उनकी देश भर मे प्रशसा हुई। वहा वह गांधीजी के साथ कई सप्ताह तक थी तथा उन्होंने पीडित जनता की सहायता की। वह उन लोगो के लिए जो धर्मांधता के शिकार तथा अपने गृहो से उद्वासित थे, मानो दया की वहिन ही थी। उद्वासितो के प्रति उनका सेवा कार्य अविस्मरणीय है। उन्होंने उनके प्रति व्यवहार में वडे धैर्य और कुशलता का परिचय दिया। उन्होने उनके साथ वड़ी दया और सहानुभूति के साथ व्यवहार किया। मैंने उद्वासितो की भीड़ को उनसे सहायता और मार्गदर्शन पाने के लिए उनके घर मे एकत्र होते हुए देखा है।

सुचिता देवी को व्यापक सम्मान प्राप्त है। उनसे मतभेद रखने वाले भी उनकी प्रशसा करते है। वहुत से लोग उनके पति के स्वभाव से भयभीत रहते है तथा उनके पास जाने में झिझकते है पर कोई भी सुचिता देवी के पास जाने मे नही झिझकता। यदि आचार्य तीक्ष्ण और चुभती वातो से चोट पहुचाते है तो सुचिता देवी अपनी मीठी वातो से धीरज वधाती हैं। सुचिता देवी ने काग्रेस सगठन का परित्याग कर दिया है पर इस सगठन में ऐसे अनेक लोग है जो उनका सच्चा सम्मान करते है। वह प्रख्यात रचनात्मक कार्यकर्त्री है। उन्हे उनके सहकर्मी वहुत चाहते हैं। वह ससद के ऐसे थोडे से सदस्यो में से एक है जिनकी वाते सम्मान के साथ सुनी जाती है। वह प्रभावशाली भाषण करती है, वह अपने उद्देश्यो का सच्चाई और योग्यता से समर्थन करती है। इसका श्रोताओ पर गहरा प्रभाव पड़ता है।

सयुक्तराष्ट्र सघीय महासभा के भारतीय प्रतिनिधि मडल की एक सदस्या के रूप मे उन्होंने प्रशंसनीय कार्य किया। उनके राजनीतिक

प्रतिद्वद्वियो ने भी यह स्वीकार किया कि उन्होने वड़ी योग्यता का परिचय दिया। भारत सरकार को विभिन्न सूत्रो से ज्ञात हुआ कि उन्होंने नयुक्त राष्ट्र सघीय महासभा को प्रभावित किया। विभिन्न समितियो मे उन्होने जो कार्य किये है उनकी प्रशसा हुई। अमेरिका में उन्होने अपना वहुमूल्य समय दूमरो की नाई वाजारो मे सौदा खरीदने, जगह जगह घूमने और व्यक्तिगत सपर्क वढाने मे व्यतीत नही किया। उन्होने अपने ममय का सदुपयोग अपने प्रिय विपयो और समस्याओ के विचारपूर्ण अध्ययन मे किया।

अमेरिका मे अपने प्रवासकाल मे वह विख्यात वैज्ञानिक आइन्स्टीन मे मिली तथा उनमे वडी प्रभावित हुई। उन्हे इस वात मे वड़ी प्रमन्नता हुई, उन्हे ऐसे सुविख्यात वैज्ञानिक से मिलने का अवमर मिला।

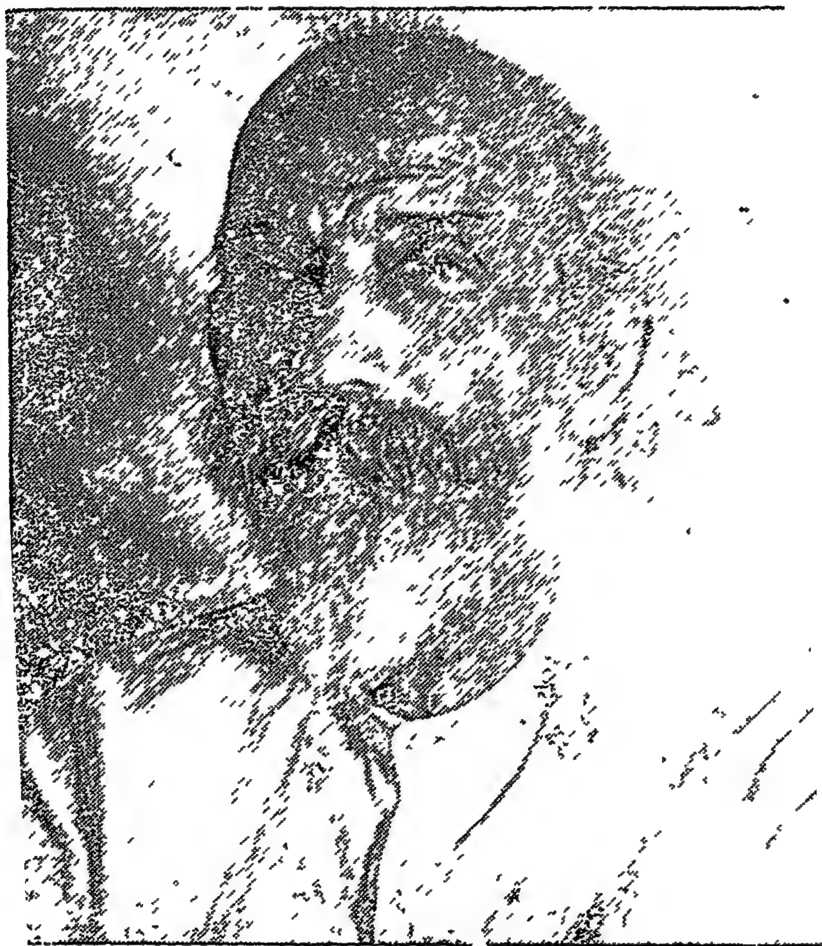
सुचितादेवी अपने पति के लिये महान् निधि है। उनकी पत्नी, मार्थी और सहयोगिनी के रूप मे वह उनके भार में हाथ वंटाती है। वह वडी विनम्र और सुशीला है।



पुरुषोमत्तदास टंडन

यदि आप उस दाढ़ीवाले चेहरे में उन दो वडी-वडी और वोलती हुई सी आखो को देखे तो आप उनसे प्रभावित हुए विना नही रह सकते। यदि आप वावू पुरुषोत्तम दास टण्डन से वातचीत करे, तो आपको ऐसा अनुभव होगा, मानो आप साक्षात् सच्चाई और ईमानदारी से वाते कर रहे है। यह विलक्षण व्यक्ति अनेक पहलुओ से आश्चर्यजनक है। देश मे ऐसे वहुत कम लोग है जो इस हद तक ईमानदारी और इतने वीहड रूप से सत्यनिष्ठ हो। वह वड़े क्षमाशील है और अत्यन्त भावुक है। उनके हृदय में उस मानवीय करुणा की अजस्र धारा वहती है, जिसके कारण मनुष्य-जीवन धन्य हो जाता है। वडी से वड़ी यातनाये सहन करना उनके जीवन का ध्येय हो गया है, वह यातना चाहे देश भर के लिए हो या अपने देशवन्धुओ के लिए। वह आत्म-संयम की जीवित प्रतिमा है और अपने जीवन से उन्होंने प्रमाणित कर दिया है कि ससार के प्रति रागात्मक भावनाए रखते हुए भी मनुष्य किस प्रकार पूर्ण विरागी का जीवन व्यतीत कर सकता है। उनके विधान सभा के अध्यक्षकाल में एक पत्रकार ने उनका वर्णन इन शब्दो मे किया था कि, "वेतन भोगी संन्यासी और घर-द्वार वाला तपस्वी।"

टडन जी ने अपने विद्यार्थी काल में क्रिकेट के मैदान मे अनेक वार विजय लाभ किया है। उन दिनो वह प्रयाग विश्वविद्यालय की क्रिकेट टीम के कप्तान थे। अव वहुत कम लोगो को इस वात पर विश्वास होगा कि किसी समय, आज के यह राजर्षि खेल-कूद मे भी अभिरुचि रखते थे और उनसे भी कम लोगो को इस वात पर यकीन् होगा कि वह अपनी युवावस्था मे अखाडा और कुश्ती मे भी वड़ी दिलचस्पी लेते थे। उनकी



पुरुषोत्तमदास टंडन

शतरज में भी वडी रुचि थी। इस सवध में यह कथा प्रसिद्ध है कि टडनजी एक वार वी० ए० की परीक्षा में केवल इस लिए अनुत्तीर्ण हो गए क्योंकि जिस दिन उन्हे परीक्षा देने जाना था उस दिन वह शतरज खेलने में इतने खो गए कि परीक्षा के विषय में विलकुल भूल गए। इस घटना के वाद इस प्रकार शतरज मे तन्मय रहना उन्हे अनिष्टकारी अनुभव हुआ और उन्होंने इस खेल को सदैव के लिए तिलाजलि दे दी।

टडनजी ने कवीर का पर्याप्त अध्ययन किया है और मैंने उन्हे उस महान रहस्यवादी तत्ववेत्ता के सवध मे अकसर वोलते हुए सुना है। वह कवीर के विचारो की कठिन गुत्थियो को अपने परिज्ञान तथा वहुमूल्य उद्धरणो से सुलझाने का प्रयास किया है, जो उनके जैसे स्नातक के सर्वथा योग्य है। वह अपनी सजीव व्यजना तथा समन्वय शक्ति के द्वारा कवीर के परस्पर विरोधी सिद्धान्तो की अस्तव्यस्तता में भी क्रमिक तारतम्य ढूढ निकालते है, जिसके कारण सुननेवाला अनायास ही चकित एवं श्रद्धासिक्त हो उठता है। वह हिन्दी मे विशेष अभिरुचि रखते है, और हिन्दी उनके प्रेम का प्रतिरूप है। एक वार कुछ लोगो को अनुभव हुआ कि टडनजी हिन्दी का प्रचार जरूरत से ज्यादा कर रहे है और वे उन पर यह आरोप लगाना चाहते थे कि उनका यह कार्य काग्रेस विरोधी होता जा रहा है। इस पर काग्रेस कार्यसमिति के एक सदस्य ने कहा कि हिन्दी के मामले में किसी प्रकार का समझौता करने के वजाय टडनजी काग्रेस छोड देना अधिक पसद करेगे। ससद मे हिन्दी को राष्ट्रभाषा वनाने के पक्ष में उन्होंने वडी ओजपूर्ण एव प्रभावोत्पादक वक्तृता दी थी। इस प्रश्न पर उनका वहुत विरोध भी हुआ, किन्तु उन्होंने वड़े साहस और दृढ सकल्प के साथ मामले को आगे वढाया और अन्त में उन्हे सफलता मिल ही गयी। फिर भी हिन्दी अक स्वीकार नही किए गए, जिस पर उन्हें कुछ असंतोष और दुख भी हुआ लेकिन सुयोग देखकर वह फिर हिन्दी अको की स्वीकृति के लिए प्रयास करेगे और उन्हे पूर्ण आशा है कि उनको इस कार्य मे भी

सफलता मिल जायगी। वह हिन्दी के शिवम् पक्ष के प्रतीक है और इस भाषा के सबसे बड़े प्रवर्त्तक है। समस्त देशमें वह हिन्दी प्रचारकी आत्मा और जीवन है।

टंडनजी प्रयाग विश्वविद्यालय के एक प्रतिभाशाली छात्र थे और उन्होने इलाहाबाद उच्च न्यायालय में वकालत भी की थी। कुछ समय तक वह नाभा राज्य के मंत्री और फिर पजाब नैशनल बैंक के सेक्रेटरी भी रह चुके है। वह एक काग्रेसजन के रूप मे सार्वजनिक जीवन मे प्रविष्ट हुए थे, और प्रयाग नगरपालिका के अध्यक्ष (चेयरमैन) भी रह चुके है। वह लोक सेवक मडल के अध्यक्ष थे और कई वर्षों तक उत्तर प्रदेश विधान सभा के अध्यक्ष रह चुके है। विधान सभा के अध्यक्ष रह कर उन्होने सिद्ध कर दिया है कि किसी दल से सम्बद्ध कोई व्यक्ति निष्पक्ष अध्यक्ष भी हो सकता है। उन्होने उत्तर प्रदेश विधान सभा में एक बार कहा था कि मै बहुमत प्राप्त कर लेने मात्र से अध्यक्ष का पद ग्रहण नही कर सकता, यदि अल्पमत के अधिकाश लोग भी मुझे अध्यक्ष पदासीन देखने के इच्छुक नही है तो मै पदत्याग करना ही उचित समझूगा। किसी व्यक्ति को यह चुनौती स्वीकार करने का साहस न हुआ क्योकि उनकी निष्पक्षता और ईमानदारी सदेह से परे की वस्तुयें थी और संसद के प्रत्येक वर्ग की उन पर पूर्ण आस्था थी। मै विश्वास के साथ कह सकता हूं कि अध्यक्ष के रूप मे वह विट्ठलभाई पटेल से भी आगे निकल गए, जिनकी लोग इतनी सराहना और सम्मान किया करते थे।

कभी-कभी टडनजी सिद्धान्तो में किसी प्रकार का समझौता करने के लिए तैयार नही होते और जिस चीज के लिए उनके हृदय मे आस्था नही उत्पन्न की जा सकती, उसके सबंध में कोई बात स्वीकार नही करते। अवसरवादियों को इस बात से अक्सर बड़ा धक्का लगता है, क्योकि इससे उनकी स्वार्थ-सिद्धि नही हो पाती। वह अत्यधिक स्पष्टवादी और अद्वितीय साहसी है। अपने राजनीतिक पदोत्थान के लिए छोटी-छोटी चालबाजियों के समर्थक नही है। इससे बरसों तक उन्हे राजनीतिक

सफलता मिल जायगी। वह हिन्दी के शिवम् पक्ष के प्रतीक है और इस भाषा के सबसे बड़े प्रवर्त्तक है। समस्त देशमें वह हिन्दी प्रचारकी आत्मा और जीवन है।

टण्डनजी प्रयाग विश्वविद्यालय के एक प्रतिभाशाली छात्र थे और उन्होने इलाहाबाद उच्च न्यायालय में वकालत भी की थी। कुछ समय तक वह नाभा राज्य के मंत्री और फिर पंजाब नेशनल बैंक के सेक्रेटरी भी रह चुके है। वह एक कांग्रेसजन के रूप मे सार्वजनिक जीवन में प्रविष्ट हुए थे, और प्रयाग नगरपालिका के अध्यक्ष (चेयरमैन) भी रह चुके है। वह लोक सेवक मंडल के अध्यक्ष थे और कई वर्षो तक उत्तर प्रदेश विधान सभा के अध्यक्ष रह चुके है। विधान सभा के अध्यक्ष रह कर उन्होने सिद्ध कर दिया है कि किसी दल से सम्बद्ध कोई व्यक्ति निष्पक्ष अध्यक्ष भी हो सकता है। उन्होने उत्तर प्रदेश विधान सभा में एक बार कहा था कि मै बहुमत प्राप्त कर लेने मात्र से अध्यक्ष का पद ग्रहण नही कर सकता, यदि अल्पमत के अधिकांश लोग भी मुझे अध्यक्ष पदासीन देखने के इच्छुक नही है तो मै पदत्याग करना ही उचित समझूंगा। किसी व्यक्ति को यह चुनौती स्वीकार करने का साहस न हुआ क्योकि उनकी निष्पक्षता और ईमानदारी संदेह से परे की वस्तुयें थी और संसद के प्रत्येक वर्ग की उन पर पूर्ण आस्था थी। मै विश्वास के साथ कह सकता हूं कि अध्यक्ष के रूप मे वह विट्ठलभाई पटेल से भी आगे निकल गए, जिनकी लोग इतनी सराहना और सम्मान किया करते थे।

कभी-कभी टंडनजी सिद्धान्तो मे किसी प्रकार का समझौता करने के लिए तैयार नही होते और जिस चीज के लिए उनके हृदय में आस्था नही उत्पन्न की जा सकती, उसके संबंध में कोई बात स्वीकार नही करते। अवसरवादियों को इस बात से अक्सर बड़ा धक्का लगता है, क्योकि इससे उनकी स्वार्थ-सिद्धि नही हो पाती। वह अत्यधिक स्पष्टवादी और अद्वितीय साहसी है। अपने राजनीतिक पदोत्थान के लिए छोटी-छोटी चालबाजियों के समर्थक नही है। इससे बरसों तक उन्हें राजनीतिक

क्षेत्र मे उच्च पद न मिल सका। वह बहुत पहले ही कांग्रेस अध्यक्ष हो जाते लेकिन अध्यक्ष पद के भाग्यनिर्णायको ने उन्हे न होने दिया। किसी ने उनसे कहा कि यदि वह हिन्दी के मामले मे अपने विचारो पर अडे रहेगे, तो उसका आगामी कांग्रेस अध्यक्ष के चुनाव मे उनके लिए बहुत बुरा प्रभाव पडेगा। इस पर उनकी भवें तन गई, चेहरा तमतमा उठा और उन्होने दृढ स्वर मे उत्तर दिया, "आप भी कैसी बातें करते है? क्या मै अपने व्यक्तिगत उन्नति की परवाह भी करता हू? मेरे सिद्धान्तो मे परिवर्तन असभव है और इसकी आशा करने के अर्थ है कि आप मझे बिल्कुल नही समझ सके।" मै उनकी यह बात सुनकर हर्ष से उछल सा पडा। ऐसा लगा, मानो कोई दिव्य अनुभूति मेरे अदर जाग उठी है।

टडनजी नितान्त स्पष्टवादी और साहसी है। वह इने गिने राजनैतिक पुरुषो मे से एक है जो सकट काल में कभी विचलित नही होते तथा दबाव के कारण सिद्धातो से डिगते नही है। वह कठिन परिस्थितियो मे भी सत्य का झडा ऊचा रखते है जब कि अनेक लोग अर्ध सत्य को ही सत्य मानने के लिए लोभित हो जाते है। वह सिद्धातो में दृढ आस्था रखते है तथा आश्चर्यजनक दृढता से उनका पालन करते है। इसका परिणाम सामान्य माप दड से आकर्षक नही रहा। अनेक वर्षो तक सामान्य नेता कांग्रेस कार्यसमिति में सम्मिलित किए गए परतु वह उससे बाहर रखे गये। कांग्रेस का अध्यक्ष पद भी उन्हे बहुत देर से तथा कुछ अनिवार्य परिस्थितियो में प्राप्त हुआ। यद्यपि वह कांग्रेस अध्यक्ष पद पर निर्वाचित हुए, परन्तु उन्हे कार्य काल समाप्ति के पहले ही पद त्याग करने के लिये विवश होना पडा। इसका मूल कारण यह था कि वह किसी दूसरे के इशारे पर नाचने के लिये तथा पदारूढ बने रहने के हेतु दूसरे के विचारो को अपने विचार बनाने के लिये तैयार नही थे। उनके अन्यतम अनुचरों ने भी तात्कालिक लाभो के फेर मे पड़ कर उनका साथ छोड़ दिया पर इससे वह निराश नही हुए। इस पूरे कांड मे उन्होने बडे धैर्य, बडी गभीरता

और शालीनता का परिचय दिया। इससे अनेक विरोधी भी उनसे प्रभावित हुए बिना न रह सके। टंडनजी ने अखिल भारतीय कांग्रेस महासमिति की दिल्ली की जिस बैठक में अध्यक्ष पद त्याग किया था, उसमें मैं उपस्थित था। उन्होंने कांग्रेस जनों से बड़ा मार्मिक अनुरोध किया कि वे लोभ लालच के शिकार न बनें, तथा सत्य के पथ का अनुसरण करें। उनका भाषण संक्षिप्त था। उसमे कटुता नही थी। उन्होने मुस्कुराते हुए सभा भवन का त्याग किया। उनके चेहरे पर यह स्पष्ट भाव था कि उन्होने जो उचित समझा किया। यद्यपि इस अवसर पर उनकी पराजय हुई, परन्तु वास्तव में यह उनके लिये विजय थी। देश भर में उनके साहस और उद्देश्य की पवित्रता की प्रशंसा हुई।

कभी कभी लोग उन्हे संप्रदायवादी समझने की भूल कर बैठते हे। इसके विपरीत उनके अनेक ऐसे मुसलमान दोस्त हे जिसके प्रति उनके हृदय मे बड़ा सम्मान है और वे मुसलमान भी टंडनजी को बहुत मानते हे। यह सत्य है कि वह देश के विभाजन के बड़े विरोधी थे। उन्होंने मुस्लिम लीग और उसके नेताओ की घोर निन्दा की थी, किन्तु सर्वसाधारण मुसलमानो के वे बिलकुल विरोधी नही। आवश्यकता पड़ने पर वह अपनी भावनाओ को रोक नही पाते और व्यक्त कर ही डालते हे। यद्यपि उन्होने महात्माजी के विचारो की अक्सर आलोचना की थी, किन्तु उनके प्रति उनकी उत्कट भक्ति रही है, क्योकि हृदय मे उनका विश्वास था कि गाधीजी विश्व के महानतम् पुरुषो मे से थे।

टंडनजी बडे उदार और संवेदनशील हे। यदि कोई उनके घर जाता है तो वह उसकी बातें बड़े ध्यान से सुनते हे तथा उसकी यथाशक्य सहायता करते हैं। बहुत से लोग उनका समय अनावश्यक नष्ट करते हे। इससे उन्हे अपनी चिट्ठी पत्रियां तथा दूसरे कामो पर ध्यान देने के लिये पर्याप्त समय नही मिल पाता। लोग उनसे अपने बच्चो के विवाह, पारिवारिक बीमारियों, घरेलू समस्याओ और आर्थिक चिंताओ के विषय में बाते करते हे।

यह यह सब बाते सुनते है तथा उन सब को योग्य सलाह देते है।

मेरा ख्याल है कि यदि इन वर्षो में सभी तरह के लोग उन्हे घेरे न रहते तो उन्हे और भी अधिक कार्य करने तथा अन्य ऐसे कार्यो को हाथ में लेने का अवसर मिलता जिनके लिये उनके जैसे निस्वार्थ नेताओ की आवश्यकता है। टडनजी सामान्य अर्थो मे आधुनिक नही है। वह लिखने पढने का काम जल्दी नही निपटाते क्योकि उनका लक्ष्य परिपूर्णता की प्राप्ति करना होता है। वह शुद्धता को भी बहुत महत्व देते है तथा कोई भी अशुद्ध शब्द वा ढीला ढाला वाक्य या लापरवाही से पक्ति नही लिखते। एक बार डाक्टर सम्पूर्णानन्द ने लिखा था—"उनमे दो त्रुटिया है जिनसे सबसे धैर्यवान मित्र भी उद्विग्न हो जाते है। पहली त्रुटि तो काम काज निपटाने का उनका ढीला ढाला तरीका है। बहुत सभव है कि उनके गभीर विचार और प्रौढ चिन्तन का फल निर्दोष रचना रहता है, पर कभी कभी यह अनुभव होता है कि वह इस परिपूर्णता की प्राप्ति का बडा महगा मूल्य चाहते है। दूसरी त्रुटि समय की अनियमितता है। उन्होने अपने व्यवहार में समय की अनन्तता की मान्यता को दिशा दर्शक सिद्धान्त मान लिया है।"

टडनजी प्राकृतिक चिकित्सा पद्धति में विश्वास करते है। वह इजेक्शनो (दवा की सुइयो) में विश्वास नही करते। उन्होने हरद्वार के कुम्भ मेला में जाते समय टीका लगवाने से इनकार कर दिया। वह उबाला हुआ भोजन तथा कच्ची शाक भाजी खाते हैं। नमक नही खाते। लबे अर्से तक पानी नही पीते क्योकि उन्हे इसकी इच्छा नही होती। वह साबुन का उपयोग नही करते क्योकि उनका विश्वास है कि मिट्टी साबुन की अपेक्षा अधिक कीटाणुनाशक है।

टडनजी उत्तर प्रदेश में कृषक आन्दोलन के जन्मदाता हैं। सब से पहले १९१० में उन्होने किसान सघ की स्थापना की थी। इसके कार्य केवल इलाहाबाद जिले तक ही सीमित थे। सन् १९२१ में उन्होने प्रादेशिक आधार पर किसानो का सगठन किया।

टंडनजी के जेल जीवन की कुछ झांकी दिये विना ऊपर लिखा गया कोई भी शब्द-चित्र संपूर्ण नहीं हो सकता। सन् १९४२ मे नैनी जेल में वह हमारे लिये शक्ति के प्रतीक थे। वही पर मैंने उनकी वास्तविक शक्ति का अनुभव किया था। जेल की उन धुंधली कोठरियो मे हमारी बुझती हुई आत्माओ के लिए वह मधुर प्रकाश दीप के समान थे, और विषाद युक्त प्राणियो के बीच वह अकेले आनन्द बिखराने वाले व्यक्ति थे। वह ऐसे कैदियो के प्रति बडे दयालु रहते थे जिनके दोष प्रमाणित हो चुके थे। एक बार जोखू नामक एक सजायाफ्ता कैदी को गुड खाने की इच्छा हुई। टंडनजी के पास अपने हिस्से का थोड़ा सा गुड़ था। जब उनके साथी ने उन्हे जोखू की इच्छा के विषय में बताया, तो उन्होने अपना गुड़ उसे देते हुए कहा कि, "जब कभी तुम्हे किसी चीज की जरूरत हो तो मुझसे कह देना।" ३ मई १९४३ को हमारे बापूजी हमसे विलग हुए तो यह अवसर बस "जीवित प्राणियो की कब्र" अर्थात जेल में उनके सुखद संपर्क की समाप्ति का दिन था। उनके हृदय मे भावनाओ का तूफान था, जो उनकी आंखो और चेहरे से स्पष्ट झांक रहा था। हममे से अधिकांश ने उनका चरण स्पर्श किया। हमे उनके विछोह का बडा दुख था। टंडनजी को इस बात का दुख था कि वह उन तमाम लोगो से बिछुड रहे थे, जिन्हें उन्होने अक्सर पथ निर्देश दिया और सहायता प्रदान की थी। दूसरे और हमें इस बात का दुख था कि हमसे हमारा एक ऐसा प्रिय जन अलग हो रहा था, जो हमारे लिए शक्ति का आधार स्रोत था। ऐसा लगता था, मानो स्वय प्रेरणा और संतोष हमसे विलग हो रहे हो, लेकिन अकस्मात् हमने अनुभव किया कि हम सब एक ही लक्ष्य की प्राप्ति के लिए प्रयास कर रहे है, इस लिए हमें चिन्ता करने का कोई कारण नही। इस भावना ने हमे शक्ति दी और जब वह जेल के दरवाज़े की ओर बढ़े, हम उच्च स्वर मे चिल्ला उठे, "टंडनजी की जय।"





एस० राधाकृष्णन्

सर्वपल्ली राधाकृष्णन्

डाक्टर राधाकृष्णन् से मिलने की इच्छा व्यक्त करते हुए क्रेमलिन में स्टालिन ने कहा था "मैं उस प्रोफेसर से भेंट करना चाहता हू, जो प्रतिदिन चौबीस घंटे अध्ययन करता है।" उस दार्शनिक ने मास्को में अपनी योग्यता और चातुर्य के कारण सोवियत अधिकारियो में इतना विश्वास उत्पन्न कर दिया था कि वे लोग उन्हे रूस का सब से बडा मित्र मानने लगे थे। मास्को मे एक सफल राजदूत होने का कारण यही था कि डाक्टर राधाकृष्णन् में विद्युत की तरह काम करने की शक्ति थी और वहा के वातावरण के अनुसार उन्होंने अपने आप को ढाल लिया था। उनका यह मिलन एक ऐतिहासिक महत्व रखता था। उनके राजनीतिक जीवन में यह एक महत्वपूर्ण बात थी। उन्हे भारत के उपराष्ट्रपति पद का भार सौंपा गया है, वह उसके लिए उपयुक्त है। राज्य-सभा का कार्य वह बडे सम्मान और गरिमा के साथ पूरा करते है। सदस्यों के नीरस और उत्तेजक भाषणो को धैर्यपूर्वक सुनते है और ससदीय विधान के अनुसार निष्पक्ष दृष्टि से उसका विश्लेषण करते है। सभा के प्रत्येक सदस्य के साथ वह निष्पक्षता का बर्ताव करते है। राधाकृष्णन् अतर्राष्ट्रीय जगत् मे दार्शनिक के रूप मे प्रख्यात है, परन्तु उनकी प्रशसा धारावाहिक वक्तृताओं के कारण उन लोगो द्वारा भी होती है जो दर्शन की सूक्ष्मताओ को नही समझते। वह धर्म, दर्शन और राजनीति का ऐसा सरल और सुन्दर विश्लेषण करते है कि अल्प बुद्धि श्रोता भी उनकी बातें समझ लेते है तथा उनसे निकटता अनुभव करते है।

एक बार मै उनका भाषण सुनने के लिए गया। सर पर श्वेत और स्वच्छ साफा बाधे और लम्बा कोट पहन ज्यो ही भवन के अन्दर उन्होने

प्रवेश किया सारा भवन हर्ष-ध्वनि से गूज उठा। उस महापुरुष के हाथ में कोई लिखा हुआ कागज़ नही था। उन्होने अपना भाषण दिया। सारे श्रोतागण स्तब्ध हो गये। उनके आंग्ल भाषा के पाण्डित्य का दर्शन हुआ। उनमे शक्ति थी, उनका भाषण प्रभावोत्पादक था। अपने वक्तृता से उन्होंने सब को चकित कर दिया। उनकी भाषा की स्पष्टता, वाक्पटुता इतनी मोहक थी कि युवक वर्ग इस प्रेरक दार्शनिक के विचारो से अधिक उसके भाषण से प्रभावित हुआ।

यदि आप राधाकृष्णन् के उस भव्य शरीर को देखेंगे, तो यही कहेंगे कि सचमुच ऐसे लोग इस दुनिया मे नाम कमाने, ख्याति पाने के लिए ही पैदा हुए है। उनकी चाल, उनके मस्तिष्क की तीव्रता और उनकी चमकती आखें, उनकी तीक्ष्ण बुद्धि का परिचय देती है। उनमे अह का भाव छुआ तक नही। वह दयालु है। आप यदि अपनी कठिनाइया उनके सम्मुख रखें तो वह आप को हर प्रकार की सलाह देंगे। उन्हे अपने अध्ययन का ज्ञान है पर गर्व नही है। वह मानव के आपसी सम्बन्ध पर विशेष ध्यान देते है। उनमे मनुष्यत्व की भावना कूट-कूट कर भरी है। उन्होंने एक बार कहा था कि "अच्छे और बुरे आदमी का भेद समझना कठिन नही। सिद्धान्ततः किसी के विचार को हम अच्छा बुरा कह सकते है किन्तु मनुष्य या स्त्री को हम बुरा-भला नही कह सकते क्योकि हर एक मनुष्य या स्त्री में थोडी बहुत अच्छाई-बुराई, ऊच-नीच, सच-झूठ विद्यमान रहता है......जीवन को प्रभावित करनेवाली उक्ति के लिए तीक्ष्ण बुद्धि की आवश्यकता होती है।"

घोर परिश्रम और तीक्ष्ण बुद्धि के कारण ही उन्हे अपने जीवन मे सफलता मिली है। अपने कठिन परिश्रम और धैर्य से उन्होने साधारण गुण को बड़े रूप मे बदल दिया है। उन्होने यह सिद्ध कर दिया है कि एक दार्शनिक एक अच्छा राजनीतिज्ञ और कूटनीतिज्ञ भी हो सकता है। दार्शनिक राजा भले ही अच्छे न हों किन्तु किसी न किसी दिन वह

दार्शनिक भारत का राष्ट्रपति होनेवाला है जो कि एक राजा की तरह ही है। लोग उन्हे दर्शन के पडित के रूप में जानते है। वहुत कम ही लोग ऐसे होगे जो यह जानते होगे कि वह उपन्यास, कविताए और नाटक भी पढते है। यदि आप में और उनमें कोई मत भिन्नता हो जाय तो वह नाराज नही होगे। वह आप के दृष्टि कोण को जानने का प्रयत्न करेगे। वह आपके विचारो को समझते तो है ही साथ ही अपने विचारोके वरावर ही आपके विचारो की भी व्याख्या करेंगे। सी० ई० एम० जोड ने एक वार लिखा था, "राधाकृष्णन् जिन दृष्टिकोणो से सहमत नही होते उसकी भी व्याख्या इस प्रकार करते है कि किसी को अपने विरोध पर विश्वास नही रहता।"

उनकी वहुत सी कहावते और घोपणाए अपने तर्क और चमक-दमक और भाषा की भव्यता के कारण वहुत प्रसिद्ध हो गयी है। उनका निम्न-लिखित कथन वहुत ही महत्वपूर्ण है।

सतयुग के आने पर सभी मस्तक कठोर हो जायेगे और सभी तकिये मुलायम।

पाश्चात्य सभ्यता की टीका करते हुए आपने कहा था —हमे पक्षी की भाति हवा में उडने और मीन की भाति जल में तैरने की शिक्षा दी जाती है किन्तु हमें यह नही सिखाया जाता कि भूमि पर किस प्रकार रहना चाहिए।

हम लोग अव वडे हो चले है। मानवता के लिए ईश्वर एक परिचारक की तरह है।

अज्ञानी होना मनुष्य का विशेपाधिकार नही, यह जानना कि वह अज्ञानी है उसका विशेपाधिकार है।

इतिहास का निर्माण करने में सैकडो वर्ष लग जाता है और किसी रीति को कायम करने मे इतिहास को वर्षो लग जाते है।

राजनीति राजनीतिक शक्ति प्राप्त करने की कला नही है। मानव

कल्याण की वृद्धि करने के लिए कला का यह एक महत्व-पूर्ण भाव है।

द्वितीय महायुद्ध के वाद उन्होंने कहा था—युद्ध में विजय प्राप्त कर लेने के वाद शान्ति खोई जा चुकी है क्योंकि वही पुरुष और वही विचार और सस्थाए जिन्होंने आपत्ति ढाई वह आज शान्ति पर शासन कर रही है।

जव आप दार्शनिको द्वारा लिखी पुस्तकें पढते है तो आप उनसे वहुत प्रभावित होते है, किन्तु जव आप उनके सम्पर्क मे आते है तो आपको कुछ निराशा होती है। आप देखते है कि वे काल्पनिक और अव्यावहारिक होते है। हमेशा वे खयालो की दुनिया में ही रहा करते है। दुनिया की वास्तविकता से वे भिज्ञ नही रहते। किन्तु राधाकृष्णन् के साथ ऐसी वात नही है। वह वड़े व्यावहारिक आदमी है। विद्वानो के साथ रहने मे उन्हे आनन्द मिलता है किन्तु इसका अर्थ यह नही कि वे साधारण शिक्षा प्राप्त व्यक्ति की उपेक्षा करते हो। हा, यह सत्य है कि वह सभी प्रकार के लोगो के साथ वहुत आराम नही महसूस करते है—और उन्ही लोगो की सगति में रहते है जिनसे उनकी काफी घनिष्टता हो। इस सम्वन्ध में सी० ई० एम० जोड ने एक घटना का जिक्र इस प्रकार किया है. "एच० जी० वेल्स के निवास-स्थान पर मैंने राधाकृष्णन् के साथ जव भोजन किया था वह दिन सरलता से नही भूल सकता। वेल्स, मैं और वैज्ञानिक विषयो के लेखक जे० डब्ल्यू० एन० सुल्लीवन वहा मौजूद थे। विज्ञान दर्शन, विश्व की स्थिति, पाश्चात्य सभ्यता का ह्रास सभव आदि विषयो पर वात चीत चल रही थी। राधाकृष्णन् वडी देर तक शान्त वैठे रहे। भोजन उन्होंने नही किया, केवल जल पी रहे थे। उनकी इस मौनता पर हम लोगो को आश्चर्य हुआ क्योंकि हम जानते थे कि वह अच्छे वक्ता और वातूनी है। यथा समय वह वोल दिया करते थे। जो कुछ वह कहते थे वह उपयुक्त होता था। ऐसे वाद-विवाद में उनका मौन रहना अधिक प्रभावोत्पादक और महत्वपूर्ण था।"

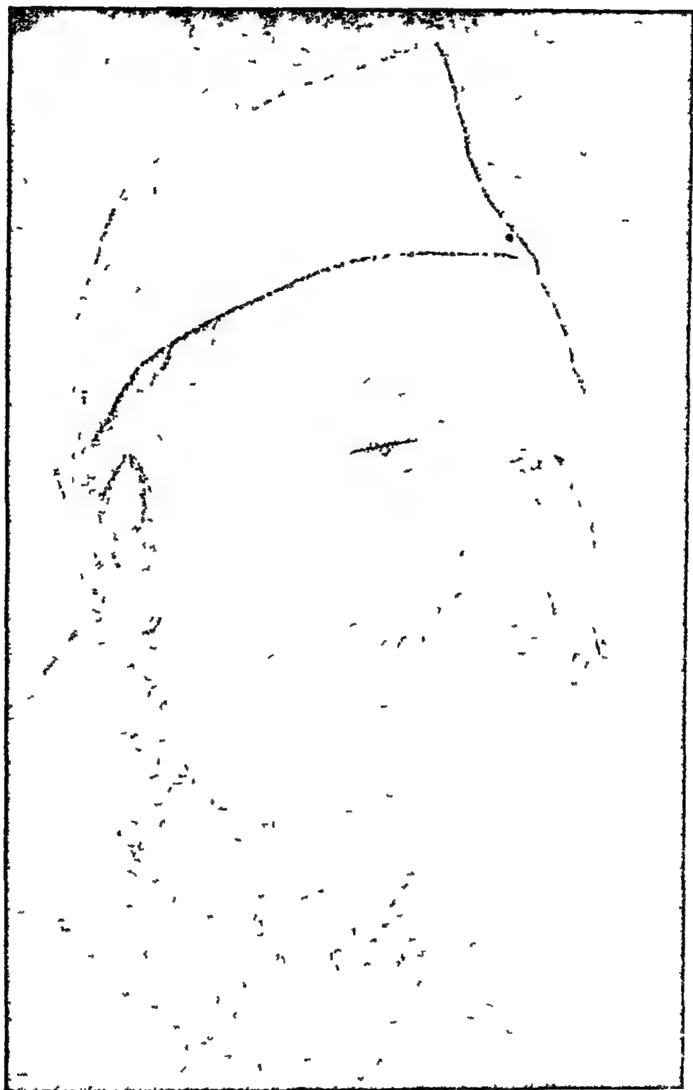
राधाकृष्णन् के पास एक मुनि की बुद्धि है और वह एक धार्मिक प्रवृत्ति के व्यक्ति हैं। परिस्थिति के अनुसार अपने आपको बदल लेने की उनकी शक्ति अद्भुत है। दार्शनिक होने के साथ ही उन्होंने विश्व को यह भी दिखा दिया कि वह एक सफल राजनीतिज्ञ भी हैं। वह एकान्त प्रेमी व्यक्ति हैं क्योंकि इससे ध्यान लगाने मे उन्हे सरलता होती है, किन्तु राजनीतिज्ञो की सगति में बहस में भी वह कोई असुविधा अनुभव नही करते। किसी गाव मे वह अकेलापन नहीं अनुभव करते। सभाओ के शोर-गुल से भी वह नही घबडाते। बुद्ध, रामानुज और हीगल के दर्शन मे उन्हे बडा आनन्द आता है। नेहरू और स्टालिन दोनो के राजनीतिक दर्शन को वह भली भाति समझते हैं। मुझे विश्वास है कि भारत के उप-राष्ट्रपति और राज्य सभा के अध्यक्ष के रूप में परम्पराएं कायम करने में वह समर्थ होगे। उनका व्यक्तित्व बहुत बडा है, भविष्य में हमें उन पर पूरा भरोसा है।



गोविन्दवल्लभ पंत

पडित गोविन्दवल्लभ पंत हमारे देश की विभू तियो मे से है। वहुत कम ऐसे व्यक्ति है जो वाग्मिता में उनकी वरावरी कर सकें। उत्तर प्रदेश में वगैर पत जी के धारा सभा की कल्पना करना कठिन था। वह दुष्यन्त रहित शकुन्तला नाटक की तरह होता। पर कुछ अनिवार्य कारणो से उन्हे केन्द्रीय सरकार में गृह विभाग मत्री का पद संभालना पड़ा। अक्सर देखा गया है कि जो लोग वैधानिक वारीकियो में व्यस्त रहते है, वे अपना क्रान्तिपूर्ण उत्साह खो वैठते है और किसी भी प्रकार के संघर्ष के प्रति उदासीन हो जाते है। परन्तु पतजी के साथ यह वात नहीं है। मुझे कोई भी ऐसा अवसर विदित नही है जव पतजी ने किसी आन्दोलन मे इच्छा-पूर्वक भाग न लिया हो या जिसका विरोध किया हो। उन्हें वैधानिकता की उपादेयता का पूरा ज्ञान है, पर वह यह भी अच्छी तरह जानते है कि एक मंजिल ऐसी आती है जव वैधानिकता वेकार पड़ जाती है और क्रान्ति मार्ग ही एकमात्र अवलम्वन रह जाता है। विधान सूत्र की वारी-कियो को सुलझाते हुए तथा विपक्षी को तर्क और वाग्मिता से पराभूत करते हुए पतजी को देखने में एक आनन्दानुभव होता है। अपने विपक्षी का खडन करते समय वह मुश्किल से किसी कठोर शब्द का प्रयोग करते है, उसकी हँसी उड़ाने की भी कोशिश नही करते, वल्कि तर्क और युक्ति के वोझ से ही अपना पलडा भारी कर देते है।

वरेली जेल से छूटने के वाद उन्होने अखवारो मे पढ़ा कि उनके स्नेह वन्धु जवाहरलाल नेहरू और आचार्य नरेन्द्रदेवजी को कितनी यातना भुगतनी पड़ी। हैलेट सरकार के भारतीय नेताओं के प्रति ऐसे व्यवहार ने उनके हृदय को चोट पहुंचाई और उन्होने एक प्रभावशाली



गोविन्दवल्लभ पंत

वक्तव्य मे सरकार को उसके दुष्कर्मों के लिए लताडा। यह आवाज़ अपने सहकारियो के साथ किए गए अन्याय और एक तानाशाही सरकार द्वारा थोपी गयी वेइज्ज़ती के खिलाफ उभडते हुए सात्विक क्रोध की थी। जब एक बार पतजी भड़क जाते हैं तो वह महान ओजस्वी वक्तृता देते हैं और उनकी लेखनी से भव्य भाषा निःसृत होती है।

३ जून सन् १९४२ को मै आचार्य कृपालानी के साथ नैनीताल गया। हम लोग अपने घर जाने के लिए कार से उतरे ही थे कि हमने सुना कि पतजी बीमार हैं। अपने घर जाने के पूर्व हम पतजी के मकान गये और तुरन्त उनके कमरे में बुला लिए गये। यह शायद पहला अवसर था जब मैंने उनको इतने नज़दीक देखा। लम्बे विशालकाय प्रभावोत्पादक डील-डौल तथा बडी आखो वाले पंतजी एक बडी सी चारपाई पर लेटे हुए किताब पढ रहे थे। ज्योही उन्होने हमको देखा वह अपनी खाट पर बैठ गए और हमारी यात्रा तथा दूसरी बातोंके बारे मे निरतर प्रश्न पूछते ही गए। उन्होने मुश्किल से हमे मौका दिया कि हम पूछ सकें कि उन की अपनी तबियत कैसी है। कुछ ही समय के अदर हमको उनकी प्रख्यात आतिथ्य-सत्कार का अनुभव हुआ जब हमारा प्रचुर जलपान से स्वागत हुआ। मैंने कई लोगो से सुना था कि दिन-दिन भर पतजी के ऊपर मुलाकातियो की चढाई जारी रहती है और उन न लोगो का सत्कार वह स्वय करते हैं। वह इस बात की बडी कोशिश करते हैं कि मेहमान और मुलाकाती लोग यह महसूस न करें कि पन्तजी उनकी किसी तरह की अवज्ञा कर रहे हैं। १९४५ के जून में पडित जवाहरलाल नेहरू अलमोडा जेल से छूटे तो मैदानो से कई लोग उनका स्वागत करने के लिए नैनीताल जा पहुचे और उनमें से अधिकाश सीधे पन्तजी के पास पहुचे और उनके घर में डेरा डाल दिया मानो उनका कोई पुश्तैनी अधिकार पतजी और उनकी जायदाद पर था। पत जी उस समय अस्वस्थ थे किन्तु मै अपने अनुभव से कह सकता हू कि अपनी रुग्ण-

शैय्या पर से ही उन्होने हर व्यक्ति के आराम और सहूलियत की देख भाल की। दिन में कई वार वह अपने मेहमानो के वारे में पूछताछ करते थे और अपने मकान को उन्होंने स्टेशन का मुसाफिरखाना वना दिया। पंतजी की सव से वड़ी विशेपता यह है कि आदमियों के साथ कैसा व्यवहार करना चाहिए, इसे वह खूव समझते है। वह मानो वैज्ञानिक रीति से लोगो का सामना करते है और उनके साथ व्यवहार में वड़ा धीरज दिखलाते है। अगर आप गुस्सा हो और उसे आप प्रकट करने के लिए पन्तजी के पास जाये तो मुझे विश्वास है कि जव आप उनसे मिलेंगे तो क्रोध लुप्त हो जायगा। वह आपको अपनी वात कहने का यथोचित अवसर देते है, और धैर्यपूर्वक आपकी वात सुनते है। पर आप उनके मतव्य को तव तक नही हिला सकते जव तक उनकी सव शकाओ का पूरा निवारण न हो जाय। मालूम तो ऐसा पड़ता है जैसे कि वह आपकी सव वात सुन रहे हों, पर आप जो कुछ कहते है उसका अधिकाश वह नही सुनते। लोगो की यह आदत होती है कि वे फिजूल की वाते करते है। पर पंतजी के पास यह सव सुनने के लिए समय नही है। आप कितना ही वोलते जाइए, पर वह उतना ही सुनेंगे जितना सारपूर्ण है और वाकी निस्सार हिस्से की तरफ वह कोई ध्यान नही देंगे। एक किस्सा मशहूर है कि एक काग्रेसी उनसे वेहद नाराज़ होकर एक वार उनके पास उन्ही की शिकायत करने के लिए गया। वह व्यक्ति लगातार करीव एक घटे तक वड़ी गर्मी के साथ उनके ख़िलाफ जहर उगलता गया, पर अत में थक कर चुप हो रहा। पंतजी ने शान्तिपूर्वक पूछा—"क्या आपको कुछ और कहना है ?" पंतजी के धैर्य, नम्रता और सहनशीलता का उस पर वड़ा असर पडा। वह आदमी शिकायत करने के लिए गया था और प्रशसा करते हुए लौटा। कहा जाता है कि तव से वह पन्तजी के अन्यतम प्रशसको में है। पन्तजी के इस राम वाण के कई शिकार हो चुके है। पन्तजी पार्वतीय ब्राह्मणो के एक कुलीन घराने में पैदा हुए। अपने वचपन से ही पन्तजी वड़े मेहनती मशहूर थे।

सन् १६०५ मे उन्होंने इलाहाबाद म्योर सेंट्रल कालेज मे नाम लिखाया और बड़ा तेजपूर्ण विद्यार्थी जीवन बिताया। जब उनके साथी गप्पे लगाया करते थे तो वह अपने कमरे में बैठे हुए आधीरात तक पढा करते थे। अपने सहपाठियो के बीच पन्तजी नेतृत्व करते थे और सहकर्मियो को उत्साह प्रदान करते थे। उनकी हिम्मत, ईमानदारी और निर्भीकता का उनके साथियो पर बडा असर पडा और वे कहा करते थे कि पन्त एक दिन बडा आदमी बन कर रहेगा। पन्तजी ने उनकी आशा पूरी कर दी है। पन्तजी की वकालत नैनीताल मे खूब धडल्ले से चलती थी, पर धीरे-धीरे राजनीति ने वकालत पर फतह पाई और उन्होंने वकालत से छुट्टी ले ली। अपने काम करने की लगन से उन्होंने दूसरे कार्यकर्ताओ पर बडा प्रभाव डाला। सन् १६१६ मे वह अखिल भारतीय काग्रेस कमेटी के सदस्य चुने गए और अब तक है। विधान वक्ता के रूप मे उन्होंने अपनी योग्यता दिखलाई और सन् १६३७ मे सयुक्त प्रात की धारा सभा मे काग्रेस पार्टी के नेता चुने गए। उन्होंने अपना मन्त्रिमडल बनाया और स्वय मुख्य मत्री के रूप में काम किया।

मुख्य मन्त्रित्व के कठिन भार से उनकी तन्दुरस्ती खराब हो गई और सन् ४२ में जब वह पकड़े गए तो उनका शरीर जर्जर हो रहा था। अहमदनगर किले के बदीगृह ने उनका स्वास्थ्य और भी बिगाड दिया। सन् १६४७ और सन् १६५१ में राज्यवासियो ने उनको फिर मुख्य मन्त्री चुना।

पन्तजी कई बार जेल गए और कारावास के कठोर जीवन के चिन्ह उनके चेहरे पर अकित है। उनकी थोडी झुकी हुई कमर तानाशाही की उन मारो की दु:खद स्मृति दिला देती है जो उन पर लखनऊ में सन् १६२८ मे साइमन कमीशन को काला झडा दिखाते समय पड़ी थी। पडित नेहरू ने अपनी आत्मकथा में इस घटना का वर्णन करते हुए कहा है, "परन्तु भाग्यवश मेरे किसी अग मे बडी चोट नही आई। हमारे कई साथी कम

भाग्यशाली थे और वुरी तरह घायल हो गए। गोविन्दवल्लभ पन्त, जो मेरे पास ही खडे थे, खासा अच्छा निशाना वने हुए थे, क्योकि वह ६ फीट और कुछ इंच ऊचे थे, और तव की खाई हुई चोट एव ...ां तकलीफ छोड गई जिसने उनकी कमर को लम्बे अर्से तक सीधा न होनें दिया और कर्मठ जीवन में वाधा पहुचाई। असल मार पीट ज्यादातर यूरोपीय सार्जेन्टो ने की।"

पन्तजी औषधियो का नियमित रूप से सेवन करते है। वह उनपर अधिक निर्भर रहते है। कदाचित् वह उनके लिए अपरिहार्य भी है तथा उन्हे अपना कार्य करने में सहायता पहुचाती है। वह वड़े कार्यशील तथा कर्तव्यपरायण व्यक्ति है। उन्होने काग्रेस संगठन में वड़ी एकता रखी। यदि उसमें कभी-कभी मतभेद हुआ है तो उसका कारण काग्रेसजनो की सत्तालोलुपता और लिप्सा है। अव भी वह दिल्ली में विभिन्न राज्यो के मन्त्रिमडलों के आंतरिक झगड़े सुलझाते रहते है। वह राज्य कांग्रेस दल तथा देश के लिए एक आधार स्तम्भ हैं। उनकी ईमानदारी सदेह के परे रही है तथा उनकी योग्यता को सभी ने मान्यता प्रदान की है।





कैलाशनाथ काटजू

कैलासनाथ काटजू

कैलासनाथ काटजू कटु निराशाओं से अधिक टक्कर खाये बिना वकील के रूप में प्रसिद्धि पायी। वह उन यातनाओ को भोगे बिना जिनसे हृदय मे कटुता उत्पन्न हो जाती है, काग्रेस नेता बन गये। जब मुझे यह ज्ञात हुआ कि वह उडीसा के राज्यपाल नियुक्त किये गये है तो मैने उनसे कहा कि "आपको आध्यात्मिक बीहडता मे राजनीतिक सन्यास दे दिया गया है।" उन्होने सरलता से कहा—"तरुण, तुम यह नही जानते कि मै यहा वहा सेवा करने का चुनाव नही करता। जब आप किसी सघटन में हो तो आपको बिना किसी हिचकिचाहट के किसी भी पद पर काम करने के लिये तैयार रहना चाहिये। मुझसे उडीसा जाने के लिये कहा गया है और मै उडीसा जा रहा हू।"

वह महान अनुशासनशील है। उन्हे इधर उधर की बातो तथा व्यर्थ के विवादो मे अरुचि है। वह अनुशासनहीन लोगो को नही चाहते। जब कोई उनसे सीधी और साफ तर्कपूर्ण तथा विचारपूर्ण बाते करता है तब तो आप धैर्यपूर्वक बाते सुनते है परन्तु यदि कोई गोलमाल बाते करता है या व्यर्थ मे दात किटाकिट करता है तो वह अपना धीरज खो बैठते है। वकील के रूप में उन्होने अनेक मुवक्किलो को अप्रसन्न कर दिया क्योकि वह उनकी व्यर्थ की और निरर्थक बातें नही सुनना चाहते थे।

एक बार एक मुवक्किल बहुत से कागज पत्र लेकर उनके पास आया तथा बातें करने लगा। डाक्टर काटजू ने कहा कि मै कागज पत्रो से तथ्य जान लूगा अतएव उसे चुप रहना चाहिये। परन्तु मुवक्किल बकवास करता ही गया। इस पर डाक्टर काटजू ने समाचारपत्र उठा लिया और

उसे पढने लगे। मुवक्किल को अपने वकील के इस उपेक्षापूर्ण व्यवहार से वडा आश्चर्य हुआ क्योकि वह उन्हे फीस के रूप मे अच्छी खासी रकम देनेवाला था। परन्तु वह उन्हें छोड नही सका क्योंकि उन दिनो डाक्टर काटजू "मुकदमे जीतनेवाले' माने जाते थे और उसे डर था कि कही विरोधी पक्षवाले उन्हे अपना मुकदमा न सौप दे। जब वह चला गया तो डाक्टर काटजू ने मुझसे कहा—"मेरी समझ मे नही आता कि लोग मेरे पास क्यो आते है। मै तुम्हे बताता हूं कि मै कानून को पर्याप्त रूप मे नहीं जानता।" मैने आश्चर्य से प्रश्न किया, "आप पर्याप्त रूप मे कानून नही जानते ?" उन्होने कहा, "नही, तुम इस बात पर विश्वास करो।" उन्हे कानून का भले ही पर्याप्त ज्ञान न हो पर वह तथ्यों को वड़े सिलसिले से प्रस्तुत करते थे तथा अपने पक्ष का जोरदार समर्थन करते थे। इससे भी अधिक गुण यह था कि वह अपने मुकदमो की अपेक्षा अपने न्यायाधीशो को अधिक अच्छी तरह से समझते थे और इस का वड़ा प्रभाव पडता था।

मुझे डाक्टर काटजू को निकट से समझने का अवसर जेल में मिला। वह सन् १९४२ मे नैनी जेल मे बाबू पुरुषोत्तमदास टण्डन और स्वर्गीय रणजीत सीताराम पडित के साथ वन्द थे। वह स्वस्थ नही थे। पर उनकी हालत को खराब करनेवाला सबसे बडा कारण "कार्यशून्यता" थी। वह बडे परिश्रमी, प्रखर विचारक तथा सजग व्यक्ति है। उनमें असाधारण मानसिक चेतना और ग्राह्यशक्ति है। उन्होने अनेक पुस्तकें पढी है। नैनी सेन्ट्रल जेल की कोठरी मे एक पुस्तक लिखी है जो आत्म-कथा सी प्रतीत होती है। यह अब तक प्रकाशित नही हुई है तथा इसकी पाण्डुलिपि को कुछ ही मित्रो को पढने का सुयोग मिला है। वह जेल में अच्छे साथी थे। अपने सहवदियो को अपना साथी मानते थे तथा उनके साथ समता भाव सहित रहते थे। उनके दुख-सुख मे सम्मिलित रहते थे। उनके साथ ताश खेलते तथा दूसरी प्रवृतियो मे भाग लेते थे। एक वदी के रूप में डाक्टर काटजू सौम्य और दयालु थे, वकील के रूप में

वह मुकदमा जीतनेवाले तथा कट्टर प्रतिद्वंद्वी थे। राज्यपाल के रूप मे वह राज्य-श्री-सम्पन्न और दयालु थे। मन्त्री के रूप में वह कार्यकुशल और कार्यक्षम है तथा मित्र के रूप मे स्नेहयुक्त और सहायक हैं।

सफलता अधिकतर चकमेबाज होती; परन्तु डाक्टर काटजू के मामले यह एक तरह से वैज्ञानिक ढग से तथा क्रमानुसार प्राप्त हुई। उन्हे न तो अपने सबध मे कोई भ्रम था और न दूसरो के सम्बन्ध मे कोई भ्रात धारणा थी। कठिन परिश्रम और कार्यपरायणता से उन्होने देश में उचित स्थान प्राप्त कर लिया है। वह दलगत राजनीति तथा सकीर्ण विचारो से सदैव दूर रहते हैं। उन्होने कभी दलबदी मे भाग नही लिया। वह किसी गुट्ट मे सम्मिलित नही हुए। उन्होने स्वार्थवश किसी का समर्थन नही किया। व्यक्तिगत द्वेप या शत्रुतावश किसी का विरोध नहीं किया। सदैव स्पष्ट-वादिता के साथ अपना मत प्रकाशित किया है तथा जिस कार्य को उचित तथा ठीक समझा है, उसे किया है। इसका परिणाम यह है कि उत्तर प्रदेश में डाक्टर काटजू के प्रशसक अधिक है पर अनुगमन करनेवाले कम हैं। वह स्वय ही अपना अनुगमन करते हैं।

डाक्टर काटजू का जन्म १७ जून सन् १८८७ में जावरा (मध्य-भारत) मे हुआ था। अपने माता पिता की आर्थिक स्थिति के कारण आपकी शिक्षा के मार्ग में कठिनाइया थी। पर शिक्षा मे आपकी लगन को देखकर आपके माता पिता ने आपकी यथाशक्ति सहायता की। काटजू को अपने माता पिता की आर्थिक सीमाओं का सदैव ध्यान रहता था। एक बार उन्होंने लिखा,—"मेरे माता-पिता ने मुझे लाहौर और इलाहाबाद भेजकर वास्तव में स्वय बडे कष्ट झेले।" उन्होने तेरह वर्प की अवस्था मे मेट्रिक परीक्षा उत्तीर्ण की। सन् १९०५ में बी० ए० परीक्षा उत्तीर्ण की। वह विज्ञान के डाक्टर होना चाहते थे परन्तु कानून के डाक्टर हो गये। पजाब विश्वविद्यालय मे बी० ए० उत्तीर्ण करने के बाद वह इलाहाबाद आ गये तथा इलाहाबाद विश्वविद्यालय मे एम०

ए० और एल०एल० वी० की परीक्षायें उत्तीर्ण की। वाद मे इलाहावाद विश्वविद्यालय ने आपको सम्मान स्वरूप कानून के डाक्टर की पदवी से विभूपित किया। कहा जाता है कि युवक काटजू अपने परिवार के आर्थिक भार को हलका करने के लिये एक रियासत मे नौकरी करना चाहते थे, पर उन्हे नौकरी नही मिली। इससे उन्हे अवश्य ही निराशा हुई होगी पर वाद में उन्होने अनुभव किया होगा कि वह असफलता उन्हे वडी सौभाग्यशाली सिद्ध हुई। यदि वह उन दिनो रियासती नौकरी मे उलझ गये होते तो इससे उनका भविष्य विगड़ गया होता। वह सन् १९०८ में कानपुर आये तथा वहा पडित पृथ्वीनाथ चक के सरक्षण में वकालत करने लगे। आज भी वह इस पडित के प्रति कृतज्ञता और सम्मान का भाव प्रकट करते है। सर तेज वहादुर सप्रू ने भी आपके प्रति स्नेहपूर्ण तथा कृपापूर्ण व्यवहार किया। आप उनके भी ऋणी है। सन् १९०४ में वह इलाहावाद हाईकोर्ट के वकील हो गये। अभी उनकी वकालत के आरम्भिक दिन ही थे परन्तु उन्होने अपने मन में सकल्प किया कि मै किसी दिन हाईकोर्ट का उच्च कोटि का वकील वनूगा। यह सकल्प उन्होनें अपने मन मे ही किया था तथा इसकी पूर्ति की। उन्हे कानूनी काम मे वड़ी रुचि है। आश्चर्य नही कि अव भी वह कभी कभी मुकदमो और अदालतो का सपना देखते हो।

डाक्टर काटजू मनोरजक सभापणकर्त्ता है। वह वडे विनोदप्रिय है। वह दूसरो की चुटकी लेते है और जव दूसरे उनकी चुटकी लेते है तव इसका भी आनन्द लेते है। जव वह अनुभव करते है कि उनके श्रोता वुद्धिमान है तथा उनकी वाते समझते है और उनकी वातो को विना समझे सिर नही हिलाते तो उनके चेहरे पर प्रसन्नता की झलक रहती है। वह दूसरो को समझाना चाहते है और स्वय नही समझना चाहते। अच्छा तर्क सुनकर वह आनन्दित होते है। वह मधुर सम्भापणकर्त्ता नही है, पर कर्णकटु भी नही है। वह समझते है, विवाद करते है, समर्थन करते है

परन्तु झडी नही लगाते । लेखक के रूप मे वह खूब लिखते है । यदि वह कोई लेख लिखने के लिये राजी हो जाय तो आपको यथा समय अच्छा लेख अवश्य ही मिल जायगा । उन्हें लम्बे लेख लिखने में रुचि नही है ।

डाक्टर काटजू वयोवृद्ध राजनीतिज्ञ है पर उनमे युवको की सी शक्ति तथा आन्दोलनकारियो जैसा उत्साह है । एक राज्य मे राज्यपाल का पद पाना उनके लिये परम पद नही था । वह मानो राकेट मे निकल कर भारतसरकार के गृह विभाग मत्री पद पर आसीन हो गये । बाद मे उन्हे सुरक्षा विभाग का कार्य भार सम्हालना पडा । उनके दृष्टिकोण मे कुछ कडापन है । इससे उन्हे गृहमत्री के रूप मे अनुकूल योग प्राप्त नही हुआ । उन्होने नजरबदी कानून का जिस कट्टरता से तथा जोरशोर के साथ समर्थन किया इससे उनके मित्रों और विरोधियो दोनो को धक्का लगा ।

डाक्टर काटजू विश्वासी और स्नेही मित्र है । उनमें एकागी विचारो की कुछ प्रवृति है परन्तु वह दूसरो के दृष्टिकोण को समझने की भी यथा-शक्ति चेष्टा करते है । अपनी सफलताओ पर उन्हे गर्व नही है परन्तु वह अपनी मान्यता पर आश्चर्यजनक रूप से अटल रहते हैं ।



वालकृष्ण केसकर

डाक्टर वालकृष्ण केसकर की खोज पडित जवाहरलाल नेहरू ने की है। एक दिन प्रात काल केसकर जागे और उन्हे मालूम हुआ कि वह विख्यात हो गये है। सन् १६४६ मे पडित नेहरू ने उन्हे काग्रेस का महा-मत्री नामाकित कर के सब को आश्चर्य मे डाल दिया। उन्होने नेहरू के विश्वास को सार्थक किया और अपनी असाधारण योग्यता का परिचय दिया। इन दिनो वह भारत सरकार के सूचना और प्रसार विभाग के मत्री है। उन्होने आलइडिया रेडियो को सशक्त बनाने का उत्कृष्ट कार्य किया है।

केसकर बड़े सरल प्रकृति व्यक्ति है। वह राष्ट्रीय और अतर्राष्ट्रीय मामलो के विचारशील विद्यार्थी है। वह ससार के प्राय. सभी देशो की यात्रा कर चुके है। वह फ्रास मे लगभग सात वर्ष रहे। कहा जाता है कि वह फ्रासीसी भाषा कई फ्रासीसियो से भी अच्छी बोलते है। वह जर्मनी मे भी रहे है। सन् १६४१ के सत्याग्रह आन्दोलन में सरकार ने उन्हे रिहा करने से इनकार कर दिया क्योकि उसका ख्याल था कि उनका जर्मनो से कुछ सपर्क था। उन्होने अखिल भारतीय काग्रेस कमेटी के विदेश मत्री के रूप में कार्य किया है। सन् १६४१-४२ मे उन्होने अच्छा राजनीतिक कार्य किया तथा बडी कठिनाइयां झेली। वह स्वभाव से शर्मीले तथा प्रचार की चकाचौंध से दूर रहते है। सन् १६४१ मे एक रात सन्नाटे मे पुलिस उन्हे मेरे घर पर गिरफ्तार करने आयी। मैंने पुलिस अधिकारियो से कहा कि यह तो बडी हास्यास्पद बात है कि आप ऐसे असुविधाजनक समय मे उन्हे गिरफ्तार करने आये है जब कि हम दोनो दिन में कई बार पुलिस थाने के सामने से गुजरे है। पुलिस इन्स्पेक्टर ने क्षमा याचना करते



वालकृष्ण केसकर

हुए कहा, "हम मे से कोई उन्हे पहिचानता नही है। रात मे ग्यारह वजे हमे पता लगा कि वह आपके पास ठहरे हुए है।"

केसकर ने १६ वर्ष की अवस्था मे स्कूल छोड दिया तथा काशी विद्यापीठ मे सम्मिलित हो गये। वाद मे वह सन् १६२७ से १६३० तक वहा अध्यापक रहे। वह आचार्य नरेन्द्रदेव के पुराने शिष्य है। उन्होने सोलह वर्ष की अवस्था में काग्रेस के नागपुर अधिवेशन मे प्रतिनिधि के रूप में भाग लिया। जव वह चौदह वर्ष के ही थे तभी काग्रेस मे सम्मिलित हो गये थे। उन्होने सन् १६३० और १६३३ के आन्दोलनो मे सक्रिय भाग लिया। सन् १६४१ में वह उत्तर प्रदेश में आन्दोलन के सचालक थे। सन् १६४२ मे वह विद्रोह की ज्वाला प्रज्वलित रखने के लिए जगह जगह गुप्त रूप से घूमते रहे। उन भूमिगत दिनो में मेरी केसकर मे दो वार भेट हुई। अनेक कठिनाइयो के वावजूद वह न तो भयभीत थे और न निराश। वह साहसपूर्वक कार्यरत थे। उनकी भूमिगत प्रवृत्तियो के वारे मे ठीक मूल्याकन नही कर मकता क्योंकि मै उन दिनो जेल मे था। प्रकृतिवश डाक्टर अपने काम और सफलताओ के वारे मे वढा चढा कर वातें नही करते। वह अपने भूमिगत जीवन की रोमाचक घटनाओ का भी उल्लेख नही करते।

केसकर व्यक्तिगत या राजनीतिक महत्त्वाकाक्षी नही है। काग्रेस के महामत्री होने के कुछ सप्ताह पूर्व मै उनने दिल्ली मे मिला था। वह सामान्य योजना युक्त जीवन व्यतीत कर रहे थे। उन्हे ज्ञात ही नही था कि कुछ सप्ताह वाद ही वह काग्रस के महत्वपूर्ण पद पर आसीन हो जायगे। उन्होने इस पद की आकाक्षा नही की। यह पद ही उनके पास पहुच गया। नेहरू को उनकी योग्यता मे विश्वास था तथा वह उनके गुण की जाच करना चाहते थे। उन्होंने उन्हे एक अवसर दिया, और केसकर ने इस अवसर के अनुरूप कार्य किया।

यदि आप केसकर से मिले तो उनमे कोई दिखावा और आडम्बर

नही पायेंगे। उनमें घमड या गर्व नही है। वह मार्क्सवाद को समझते है पर कम्यूनिस्टों की तरह नीरस शब्द जाल फैलाने और मार्क्सवादी ढकोसले से दूर रहते है। वह सुलेखक है तथा उनके लेख राजनीतिक शब्दाडम्बर से शून्य रहते है। उनके लेखों मे उनके विचारशील मस्तिष्क की छाप रहती है।

पहले केसकर सुख सुविधाओ के प्रति उदासीन रहते थे, पर अब यदि ये उन्हे उनकी इच्छानुसार प्राप्त हो जायं तो उन्हे पसंद करते है। यद्यपि उनका दृष्टिकोण मूलत पूर्वीय है, तथापि वह अनेक पश्चिमी चीजो के प्रशसक है। विदेशो में दीर्घकालीन वास का अनेक भारतीयो पर कुप्रभाव पडा है परन्तु केसकर इससे मुक्त रहे है। काशी विद्यापीठ का स्वर उनमे अब भी सुनाई पडता है।

केसकर प्रभावशाली वक्ता नही है। उनमे उन नाटकीय वक्ताओ के गुणो का अभाव है जिनसे श्रोताओ की हर्षध्वनि प्राप्त कर ली जाती है। वह उस प्रचलित करतल ध्वनि के प्रति उदासीन है जो कई राजनीतिज्ञों के मस्तिष्क को कुछ विकृत कर चुकी है। डाक्टर केसकर को माला अर्पित तथा अभिनदन किए जाते समय देखिए, वह युवती के समान शरमाते और असमंजस में पड़ जाते है।

केसकर अविवाहित है। अनेक लोगों का खयाल है कि वह कुछ एकाकी अनुभव करते होगे। पर वह अपने जीवन की सबसे बडी सफलता इस बात में अनुभव करते है कि विवाह बन्धन से बच गए। वह अधिकतर कहते है "यदि मेरे पत्नी होती तो मैं कैसे इतना घूम फिर सकता था ?" इसमें सदेह नही कि जब वह सन् १९४२ के तूफान के अनाथ थे तब यह अच्छा ही था कि वह पारिवारिक चिताओ से मुक्त थे। वह शास्त्रीय संगीत के इतने प्रेमी है कि अच्छा कार्यक्रम सुनने के लिए मीलो पैदल जा सकते है।

केसकर यह कभी अनुभव नही करते कि मत्री होना बहुत बडी बात है।

यद्यपि वह इस समय केन्द्रीय सरकार के मन्त्री हैं, परन्तु यदि वह इस पद से मुक्त हो जाय तो भी दुखी नहीं होंगे। वह सामाजिक प्रतिष्ठाओं के प्रति उदासीन हैं। उनमें कुछ एकांतप्रियता है। कांग्रेस के बाहर उनके अनेक प्रिय मित्र हैं। वह अपने व्यक्तिगत संबंधों में राजनीतिक मत भिन्नता को आडे नहीं आने देते वह निम्नकोटि की प्रतिद्वंद्विताओं तथा ईर्षाओं से मुक्त हैं। अपने ही ज्ञान के प्रकाश में कार्य करते हैं तथा कर्त्तव्य पालन को ही पुरस्कार मानते हैं। वह पदों की आकांक्षा नहीं करते। पद यथा समय उनके पास पहुंच जाते हैं। सत्ता से वह गर्वीले और दीवाने नहीं हुए हैं। किसी के प्रति वह कडे शब्दों का उपयोग नहीं करते। स्वभावतः संकोचशील और विनम्र हैं। वह जानते हैं कि सत्ता और राजनीति वायवीय हैं जब कि प्रेम, मित्रता और साहचर्य का जीवन में स्थायी स्थान है। उनका सर्वश्रेष्ठ गुण यह है कि मैत्री धर्म का अच्छा निर्वाह करते हैं।



तेज बहादुर सप्रू

सर तेज वहादुर सप्रू का जन्म दिल्ली के एक कश्मीरी ब्राह्मण परिवार मे हुआ था। उनके पिता का नाम पडित राधाकृष्ण था। वह सयुक्त प्रात (उत्तर प्रदेश) मे एक प्रशासकीय पद पर थे। सरकार ने उन्हे एक जागीर भी दी थी। उनके पिता का नाम अम्विका प्रसाद था। वह पारिवारिक सम्पत्ति की देखरेख करते थे। सर तेज का जन्म अलीगढ में सन् १८७५ मे हुआ। उन्होने सन् १८९० मे चौदह वर्ष की अवस्था मे मेट्रिक की परीक्षा स्थानीय हाई स्कूल से उत्तीर्ण की। इसके वाद उन्होने आगरा कालिज मे प्रवेश किया। यहां से सन् १८९२ मे इन्टरमीजिएट की परीक्षा उत्तीर्ण की। सन् १८९४ मे वी० ए० की परीक्षा उत्तीर्ण की। सन् १८९५ मे उन्होने अग्रेजी में एम० ए० परीक्षा प्रथम श्रेणी मे प्रथम स्थान प्राप्त कर उत्तीर्ण की। इसी वर्ष कानून की परीक्षा एलएल० वी० भी उत्तीर्ण की। मुरादावाद मे वकालत का प्रारम्भिक अनुभव प्राप्त कर अक्तूवर १८९८ से इलाहावाद हाई कोर्ट मे वकालत करने लगे। आरम्भ मे उन्हे मुकदमे नही मिलते थे, पर धीरेधीरे मुकदमे मिलने लगे। उसके वाद से पचास वर्ष तक उन्होने सफल वकालत की। जिन दिनो उन्हे मुकदमे नही मिलते थे उन दिनो वह कानून का वारीकी के साथ अध्ययन करते थे। उन्हे सन् १९२३ में सर की पदवी मिली। उन्होने अपने सवल प्रतिद्वद्वियों से अनेक जोरदार कानूनी लड़ाइयां लडी और अधिकाश मामलो में विजयी हुए। यह स्मरणीय है कि वह सन् १९१२ मे लखनऊ चीफ कोर्ट में प्रसिद्ध सर रासविहारी घोप के खिलाफ खड़े हुए तथा समस्त प्रात मे अपनी वुद्धिमत्ता और योग्यता के लिए प्रशसित हुए। वह भारत की सभी हाई कोर्टो (उच्च न्यायालयो) मे कभी न कभी

मुकदमे कर चुके हैं। वकील के रूप मे उनकी इतनी ख्याति बढी कि कहा जाता है कि कुछ प्रातो के अधिकारी वर्ग उच्च न्यायाधीशो की नियुक्ति के विषय मे उनसे सलाह लिया करते थे। सन् १९१३ मे वह प्रातीय धारा सभा के सदस्य चुने गए। उसी वर्ष उन्होने राज्य समाज सम्मेलन (प्राविंसियल सोशल कान्फ्रेंस) की अध्यक्षता की।

सन् १९१६ मे वह केन्द्रीय धारा सभा के सदस्य चुने गए। सन् १९२० मे जब वह केन्द्रीय विधान परिषद के सदस्य थे तब भारत सरकार के कानून विभाग के मत्री नियुक्त हुए। अस्वस्थता के कारण उन्होने दो वर्ष पश्चात् मन्त्रिपद से पद त्याग कर दिया। वह माटेग्य-चेम्सफोर्ड सुधार योजना के विवरण को तैयार करने के लिए नियुक्त लार्ड साउथबरो की कार्य एव मतदान समिति के सदस्य थे। लार्ड सेलबोर्न की कमेटी से लदन में मिलने वाले महत्वपूर्ण प्रतिनिधि मडल के भी सदस्य थे। काग्रेस के उग्रवादियो से मतभेद होने के कारण वह सन १९१९ में उससे पृथक हो गए तथा इसी वर्ष नरमदल मे सम्मिलित हो गए। वह नरम सघ (लिबरल फेडरेशन) के सन् १९२३ और १९२५ मे अध्यक्ष थे। बाद में नरम दलीय नेताओ से कुछ महत्वपूर्ण मामलो मे मतभेद हो जाने के कारण इससे भी पृथक हो गए। सन् १९२३ मे वह लदन की इम्पीरियल कान्फ्रेंस के सरकारी प्रतिनिधि नियुक्त हुए। इस कान्फ्रेंस मे ब्रिटिश राष्ट्रमडल के देशो मे भारतीयो की स्थिति पर विचार होते समय उन्होंने बडी प्रमुखता से कार्य किया। वह मुडीमेन जाच समिति के भी सदस्य थे। इस समिति का अल्पमतीय विवरण तैयार करने मे आपने बडा सहयोग दिया। वह प्रिवी कौंसिल के सदस्य भी नियुक्त किए गए।

सर तेज ने कानूनी पेशे को चमकाया। उनका देश के वकीलो मे सदैव बडा सम्मान था। उन्होने उच्च स्तर के व्यवहार का परिचय दिया। उनकी ईमानदारी सर्व विदित थी। उनकी बडी आय थी, पर वह लोभी नही थे। वह अनेक लोगो का काम बिना रुपये लिए कर देते थे। उनकी

प्रशसा में सर मौरिस ग्वायर ने कहा था, "उनके लवे और सम्माननीय कार्यकाल मे उन्होने उपयुक्त न्याय प्रशासन मे यथाशक्य उच्चतम स्तर के व्यवहार पर सदैव ज़ोर दिया। उन्होने इस वात पर भी ज़ोर दिया कि सच्चे, स्वतत्र और सशक्त वकीलो की सहायता के विना स्वतत्र से स्वतत्र न्यायाधीश भी अशक्त हो जायगे। इन सिद्धातो पर वह दृढता-पूर्वक जमे रहे तथा उनको मन, वचन और कर्म से पालन कर आदर्श उपस्थित किया है। ऐसे लोग अपने पेशे के लिए गौरवशील तथा प्रतिष्ठा-जनक हैं।"

सन् १९१० में सर तेज की पत्नी का देहात हो गया। उस समय सर तेज की अवस्था ३५ वर्ष की थी। उनका दाम्पत्य जीवन वडा सुखी था। पत्नी विछोह से वे वहुत दिनो तक दुखी रहे। उन्होने दूसरा विवाह नही किया। उनका जीवन निष्कलक रहा। कई दृष्टियो से उनका पारिवारिक जीवन आदर्श था। जव उनका देहात हुआ उस समय उनके तीन पुत्र, दो पुत्रिया, चौवीस पौत्र-पौत्रिया तथा सात प्रपौत्र-प्रपौत्रिया थी। उनके ज्येष्ठ पुत्र श्री प्रकाश नारायण सप्रू इलाहावाद उच्च न्याया-लय के न्यायाधीश थे। दूसरे पुत्र श्री त्रियुगी नारायण सप्रू इलाहावाद विश्वविद्यालय मे कानून के अध्यापक है। श्री आनद नारायण सप्रू आई० सी० एस० (इडियन सिविल सर्विस) के सदस्य है तथा उत्तर प्रदेश सरकार के अतर्गत एक उच्च पदस्थ अधिकारी है।

स्वर्गीय सर सी० वाई० चितामणि और सर तेज घनिष्ठ मित्र थे। सर तेज नित्य के समाचारो को जानने तथा सम्पादक चितामणि से लम्बे वार्त्तालाप के लिए अधिकतर लीडर कार्यालय जाते थे। वह मद्रासी पकवानो के वडे प्रेमी थे तथा अधिकतर चितामणि का आतिथ्य ग्रहण करते थे। वह कभी-कभी भोजन के समय पहुचते थे तथा "चारु" चखना चाहते थे। वह मिठाइयो और पकौडियो के भी वडे शौकीन थे। उनकी पाचक क्रिया अच्छी थी तथा अच्छे भोजन की रुचि कभी कम नही हुई।

सर तेज एक तरह से निरंतर धूम्रपान करते थे। वह सायकाल दरबार लगाया करते थे जिसमें विभिन्न सम्प्रदायो और विचारो के लोग उपस्थित रहते तथा उनका आतिथ्य ग्रहण करते थे। सफेद कुरता और पायजामा पहने वह गादी पर पालथी लगाकर बैठते थे। कभी हुक्का, कभी चुरुट और कभी सिगरेट पिया करते थे। बीच-बीच मे पान का दौर चलता रहता था। कहा जाता है कि एक बार वह बहस कर चुकने के बाद धूम्रपान करने के लिए अदालत के बाहर गए, पर सर तेज के प्रतिपक्षी ने कोई ऐसा प्रश्न उठा दिया जिसका उत्तर सर ग्रिमवुड मायर्स उनसे चाहते थे। तुरत सर तेज को बुलवाया गया। प्रधान न्यायाधीश ने कहा, "सर तेज बहादुर सप्रू आप कुछ देर और बाहर रहते तो अच्छा रहता नही तो कही तुम्हारी बहस धुए में ही खतम न हो जाय।" ज्योंही मुख्य न्यायाधीश ने ये शब्द कहे त्योंही सर तेज मारे हँसी के लोट पोट हो गए।

कहा जाता है कि जब सर तेज लदन मे थे तब एक दिन बहुत रात बीते एक पत्रकार ने उन्हे टेलीफोन किया और कहा, "हमारे भारतीय कार्यालय से समुद्री तार द्वारा हमे ज्ञात हुआ है कि आपको शाही खिताब मिलने वाला है ?" सर तेज ने कहा, "हा, तो क्या बात है ?" पत्रकार ने कहा, "महाशय, क्या मै जान सकता हू कि आपने अपने लिए कौनसा नाम चुना है।" सर तेज ने उत्तर दिया, "ड्यूक आफ ब्लेजेज़' (जहन्नुम के राजकुमार) और इतना कहकर टेलीफोन रख दिया।

सर तेज म्यूनिसिपल बोर्ड कार्पोरेशनो आदि से अभिनदन पत्र स्वीकार नही करते थे। उन्हे जुलूस, मालाये तथा सार्वजनिक थैली समर्पण भी अरुचिकर थी।

सर तेज न केवल वकील वरन् उच्च कोटि के विद्वान भी थे। उन्होंने अग्रेजी साहित्य का गम्भीर अध्ययन किया था तथा इग्लेड और भारत के प्रकाशक उन्हे नियमित रूप से नयी पुस्तकें भेजा करते थे। उनका फारसी

और उर्दू का भी गहरा अध्ययन था। वह फारस की भाषा और साहित्य को भली भाति जानते थे। सन् १९४३ में ईरान का सांस्कृतिक प्रतिनिधि दल भारत आया था। उनकी मातृभाषा मे सर तेज की असाधारण विद्वत्ता से वह बडा प्रभावित हुआ। सर तेज उर्दू के बडे प्रेमी थे तथा अनेक वर्षो तक अन्जुमने तरक्कीए उर्दू के अध्यक्ष रहे। उन्होने इलाहाबाद मे एक समिति सघटित की जिसका नाम 'रूहे अदब' था। इस समिति का उद्देश्य उर्दू साहित्य के सास्कृतिक पक्ष को विकसित करना था। अधिकतर उनकी यह आलोचना की गई है कि वह हिन्दी के प्रति उदासीन थे, पर लोग यह भूल जाते है कि सर तेज के आरम्भिक जीवन काल में कश्मीरी ब्राह्मण हिन्दी से अनभिज्ञ थे तथा उन्हे हिन्दी की शिक्षा नही मिली।

सर तेज खेल कूद के शौकीन नही थे। वह कोई खेल नही खेलते थे। व्यायाम तो कदाचित ही करते हो। ऐसा लगता था कि शारीरिक यत्र इतना अच्छा था कि उन्हें व्यायाम की आवश्यकता ही नही थी। सर तेज आजीवन बहुत कुछ चगे रहे।

सन् १९४२ में सर तेज का ब्रिटिश सरकार पर से विश्वास उठ गया। विदेशी नौकरशाही ने उन दिनो जैसा अमानुषिक दमन चक्र चलाया उससे उन्हें बड़ी वेदना हुई। सन् १९४३ में काग्रेस के उद्देश्य का समर्थन करने के लिए उन्होने जो कार्य किया उसकी काग्रेसी नेताओं ने प्रशंसा की तथा उनके प्रति बड़ा आदर प्रकट किया।

सर तेज कभी नारे बाज़ नही थे। राजनीति के प्रति उनका दृष्टिकोण तर्क तथा स्वस्थ बुद्धिमत्ता पर आश्रित था। एक दिन जब मैंने उनसे भेट की तब वह चगेज खा के बारे में एक पुस्तक पढ़ रहे थे क्योंकि कुछ मुस्लिम लीगी काग्रेस को उस निर्मम विजेता की याद दिलाकर धमका रहे थे। दूसरी बार मैंने उन्हें रोमन साम्राज्य के पतन की कहानी पढते पाया। वह साम्राज्यो के पतनों में समानता ढूढ रहे

थे। भारत मे भी ब्रिटिश साम्राज्य पतन के गर्त की ओर बढता जा रहा था। सर तेज के पुस्तकालय की गणना देश के बडे पुस्तकालयो मे थी। उसमे न केवल कानून की वरन् अन्य विषयो की भी पुस्तके थीं। सर तेज की मृत्यु के कुछ वर्ष पूर्व उनमे और पडित नेहरू मे बडी मैत्री और परस्पर समझबूझ विकसित हो गई। जब भी पडित नेहरू इलाहाबाद आते थे तब सर तेज से मिलने अवश्य जाते थे।

सर तेज ने न्यायालय की प्रतिष्ठा भग के आरोपो मे समाचार पत्रो की ओर से कई बार पैरवी की। वह समाचार पत्रो की स्वतत्रता के हामी थे तथा चाहते थे कि उन्हे यथेष्ट आलोचना करने की स्वतत्रता रहे। वह आखिरी बार अदालत मे आज़ाद हिन्द फौज के मामलो मे स्वर्गीय भूलाभाई देसाई, पडित जवाहरलाल नेहरू और डाक्टर कैलाश नाथ काटजू के साथ खडे हुए थे।

वह बडे मनोरजक सभाषणकर्त्ता थे। उनका सदैव बडा सौजन्य-पूर्ण व्यवहार था। राजनीति में निष्ठ तर्क सगति और कानून में पाडित्य के कारण वह सर्वत्र विख्यात हो गए थे। वह बडे विनोदप्रिय थे। अपनी अतिम रुग्णावस्था मे एक दिन उनके पैरो के तलुओ मे बडी जलन पड रही थी। उन्होने नर्स (परिचारिका) को बुलाया और कहा, "देखो मेरे पैरो में बडी जलन पड रही है। मै मृत्यु के पूर्व ही जला जा रहा हू।"

सर तेज का देहात २० जनवरी १९४९ को हुआ और इसके साथ ही भारतीय राजनीति का एक अध्याय समाप्त हो गया। वह ब्रिटिश नरम परम्पराओ की श्रेष्ठ उपज थे जिन्होने असहयोग के पूर्व काल के राजनेताओ को प्रभावित किया। वह सज्जन और देशभक्त थे। अपने इरादो की पवित्रता के कारण उनसे मतभेद रखने वाले भी उन्हें चाहते थे। गाधीजी अपने भिन्न दृष्टिकोण के बावजूद उन्हे चाहते थे क्योकि उन्होने यह अनुभव किया था कि सर तेज बडे सत्य प्रेमी तथा बडे देश प्रेमी थे।



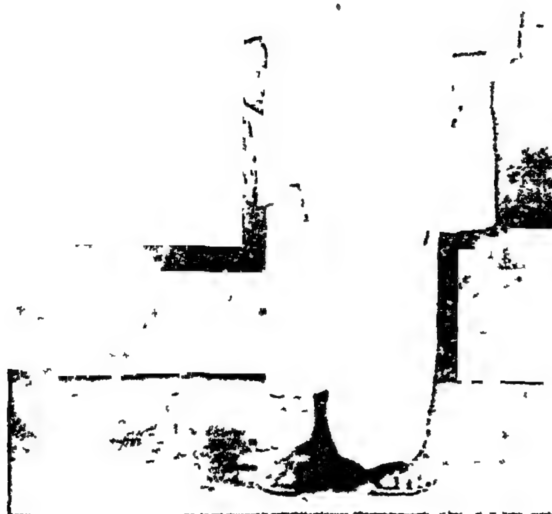
जमनालाल बजाज

देश के लिए जीने तथा प्राण न्योछावर करने वाले प्रसिद्ध देश भक्तों की कोटि में सेठ जमनालाल बजाज अपने ढंग से चमकते है। बजाज के जीवन की कहानी एक वणिक् युवराज की कहानी है जो देशभक्त हो गया तथा जिसने देश की सेवा तन, मन और धन से की। ११ फरवरी १९४२ को उनकी मृत्यु से भारत ने एक महान देशभक्त, गांधीजी ने एक सच्चा अनुचर, कांग्रेस ने एक जगमगाता रत्न और व्यावसायिक समाज ने एक आदर्श व्यक्ति खो दिया।

जमनालालजी का जन्म ४ नवम्बर सन् १८८९ मे हुआ था। बचपन से ही उनमें नेतृत्व के लक्षण दिखाई पड़ते थे। सम्पत्ति ने उनके जीवन पर कोई विकृत प्रभाव नही डाला था। उन्होंने उसका जन सेवा में उपयोग किया। वह सन् १९२० में कांग्रेस में सम्मिलित हुए तथा अनेक राजनीतिक तूफानो को सहन किया। वह २२ वर्षो तक कांग्रेस कार्यसमिति के सदस्य रहे तथा आठ बार जेल गए। वह बडी संघटन शक्ति के व्यवसायी थे। उन्होंने अनेक संस्थायें संस्थापित की तथा जरूरतमदो को सहायता करने मे कभी नही हिचके।

जमनालालजी सेठ बच्छराज के गोद लिए पुत्र थे। एक बार सेठ बच्छराज ने गुस्से में उनसे कहा, "तुम्हें मुझसे नहीं बल्कि मेरी सम्पत्ति से प्रेम है। तुम अपने पिता के पास वापस जा सकते हो।" इससे युवक आत्माभिमानी जमनालाल के हृदय को ठेस पहुची और वह बच्छराज के यहा से चले गए। वह बच्छराज की सम्पत्ति पर अपने हिस्से का दावा कर सकते थे, पर उन्होंने अपने हिस्से को छोड़ने का दस्तावेज भेज दिया। उन्होंने बच्छराज को एक पत्र भी लिखा। उस पत्र में उन्होंने स्पष्ट लिख





जमनालाल वजाज

दिया कि, "आज से मैं आपसे एक छदाम भी नही लूगा। मेरे मन में आपके प्रति कोई दुर्भाव नही है। मैं आपकी सम्पत्ति पर कोई दावा नहीं करता। आप दीर्घायु हों, मैं ईश्वर से यही प्रार्थना करूंगा। आपसे प्रार्थना है कि मेरे समस्त अपराधो को क्षमा कर दें। मेरी सम्पत्ति के लिए कोई आकांक्षा नही है। आपको विश्वास दिलाता हूं कि मैं आपकी सम्पत्ति पर कोई दावा नही करूंगा।"

जब उन्होने यह पत्र लिखा था, तब उनकी अवस्था केवल सत्रह वर्ष की थी। इससे बच्छराज बड़े प्रभावित हुए। उन्होंने अपने व्यवहार पर दुख प्रकट किया और जमनालालजी को वापस बुला लिया।

जमनालालजी सम्पत्ति से दूर भागते थे पर सम्पत्ति उनका पल्ला पकड़ती थी। उनके पास भारी सम्पत्ति थी और उन्होंने इसका उपयोग दूसरो के सहायतार्थ तथा योग्य कार्यों में किया। परंतु जहा तक उनका व्यक्तिगत संबंध था वह बड़े "कंजूस" थे। वह सरल जीवन व्यतीत करते थे। उन्होने अपने लिए कोई महल नही बनवाए। तन पर मोटी खादी के कपड़े पहिनते थे। जब गांधीजी सपत्ति-संरक्षण के सिद्धान्त की बात करते थे तब उनके मन में सेठ जमनालाल जैसे लोगों का ही ध्यान रहता था। गांधीजीने जमनालालजी के प्रति श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए कहा था, "जब भी मैंने धनिको के बारे में जन साधारण के हित मे अपनी सम्पत्ति के संरक्षक बन जाने के लिए लिखा तब मेरे मन में मुख्यत: इसी वणिक-युवराज का ध्यान रहता था। यदि उनका सम्पत्ति-संरक्षण पूर्ण आदर्श नही था तो भी इसमें उनका कोई दोष नही था। मैं जान बूझकर उन पर अंकुश रखता था। मैं उन्हे उत्साह के क्षणो में ऐसा कोई कदम नही उठाने देना चाहता था जिसपर वह शांतिपूर्ण क्षणो पर पछताते। उनमें निराली सरलता थी। उन्होने अपने लिए जो भी घर बनवाया वह "धर्मशाला" बन गयी। राजनीतिक बारीकियो में वह अपना पुष्ट मत प्रस्तुत करते थे। उनका निर्णय परिपक्व होता था। संपत्ति त्याग

करने का अंतिम निर्णय तो सर्व श्रेष्ठ था। वह रचनात्मक कार्य मे अपने शेष जीवन तथा अपनी समस्त शक्ति को लगाना चाहते थे। यह कार्य गौरक्षण के रूप में देश के पशु धन के सरक्षण का था। मैंने उन्हे इस कार्य में असीम मनोयोग तथा उत्साह से जुटे देखा। वह जाति, धर्म और रग भेद का ख्याल किये विना उदार थे। वह ऐसे कार्य करते थे जो व्यस्त पुरुष के लिये साधारणत. करना कठिन था। वह वडे सयमी थे। उनके देहावसान से ससार मे एक अभाव हो गया। देश ने अपना एक वडा साहसी सपूत खो दिया।"

जमनालालजी कार्य कुशलता के मूर्तिमान प्रतीक थे। उनका जिन सस्थाओ से सवध था उनके वारे मे यह पूर्ण विश्वास था कि एक छदाम भी व्यर्थ खर्च नही होगा। आचार्य कृपालानी ने उनकी प्रशसा में कहा था, "सस्थाओ तथा ट्रस्टो से सेठजी के सम्पर्क से इस वात का पूरा विश्वास रहता था कि उनका कोष व्यर्थ खर्च नही होगा। अखिल भारतीय काग्रेस कमेटी के हिसाव-किताव के सही और सिलसिलेवार लेखे जोखे का श्रेय उन्ही को था।"

जमनालालजी की खादी, हरिजन उद्धार, राष्ट्रभाषा प्रचार और गो सेवा जैसे रचनात्मक कार्य में सच्ची रुचि थी। वह वडे सवेदनाशील थे। उनके जीवन का यह विरद-वाक्य था—"कभी निराश न होओ।" विहार जमनालालजी का वडा कृतज्ञ है। जव सन् १९३४ में वहा भूकम्प से धन जन की अपार हानि हुई तो जमनालालजी वहा गये। अनेक दिन वहा ठहरे तथा पीडितो की सहायता की।

कभी जमनालालजी रायवहादुर तथा अवैतनिक न्यायाधीश (आनरेरी मजिस्ट्रेट) भी थे। जव वह सन् १९२१ मे गाधीजीके नेतृत्व मे काग्रेस आन्दोलन मे सम्मिलित हुए तो उस खिताव को त्याग दिया।

उन पर गाधीजी का वड़ा प्रभाव पडा। एक दिन युवक जमनालाल ने गाधीजी से कहा—"मै आपसे एक दान चाहता हू।" गाधीजी को उनके

कथन पर आश्चर्य हुआ पर उन्होने कहा, "अच्छा कहो, क्या चाहते हो, यदि मुझमें क्षमता होगी तो मै उसे तुम्हे दूगा।" जमनालालजी ने तुरत कहा, "मेरी इच्छा है कि आप मुझे देवदास का भाई माने तथा अपना पांचवा पुत्र समझें।" गाधीजी को इस पर सुखद आश्चर्य हुआ और उन्होने कहा, "तथास्तु।" जमनालालजी के लिये यह गौरव की बात थी पर इसके साथ ही उनका दायित्व बढ गया था। उन्होने इस दायित्व का अच्छी तरह निर्वाह किया और बापू के सदैव भक्त रहे। उन्होने बापू का अनुसरण किया और उनकी प्रतिष्ठा के अनुसार कार्य किया। श्री कन्हैयालाल माणिकलाल मुशी ने जमनालालजी बजाज के निधन पर 'सोशल वेलफेयर' में लिखा—"जमनालालजी प्रतिभाशाली व्यवसायी थे। यदि वह गाधीजी के प्रभाव में न आये होते तो सामान्य अर्थ मे भारत के प्रमुख व्यवसायी बन गये होते। इसमें संदेह नहीं कि वह वास्तव में प्रमुख व्यवसायी थे क्योकि गाधीजी के साम्राज्य मे उनके जिम्मे रचनात्मक कार्य का प्रबन्ध था। उनकी सघटन शक्ति का उपयोग चर्खा सघ, हिन्दी प्रचार तथा अन्य देश व्यापी प्रवृत्तियो में किया गया। उनका मध्यप्रदेश के सार्वजनिक जीवन पर अदृश्य प्रभाव था। उन्होने जयपुर प्रजामडल का नेतृत्व किया। कांग्रेस के उच्चस्थ नेतृत्व मडल में वह स्वस्थ दृष्टिकोण का परिचय देते थे जिस पर पक्के राजनीतिज्ञो को आश्चर्य होता था। यद्यपि उनका शरीर स्वस्थ, सुदृढ था पर बार बार की जेल यात्रा ने उसे जर्जर कर दिया था। भारत में ब्रिटिश नौकरशाही के निंदनीय कृत्यो का इससे बडा क्या उदाहरण हो सकता है कि उसने सन् १९३२ में इस धनपति को, भारत के इस प्रमुख नेता तथा आधुनिक भारत के एक महान सज्जन पुरुष को जेल मे 'बी' (दूसरी) श्रेणी के योग्य भी नही समझा। बम्बई सरकार ने उन्हे धूलिया जेल में दो वर्ष तक 'सी' (तीसरी) श्रेणी मे रखा।" बजाज ने कोई कार्य अनमने ढग से नही किया। अपने जीवन के अंतिम काल मे उनका स्वास्थ्य अच्छा

नहीं, था, पर इससे कार्य करने के उत्साह में कोई कमी नही आयी थी। चिकित्सको तथा हितचितको ने उन्हे विश्राम करने की सलाह दी थी, पर वह तो विश्राम करना जानते ही नही थे। उन्होने गो सेवा का कार्य अपने हाथ में लिया। उनकी महत्वाकाक्षा देश के पशुधन रक्षण तथा संवर्धन की थी। अपने देहान्त के कुछ दिन पूर्व उन्होने गो सेवा सम्मेलन आमन्त्रित किया था जिसमें भारतीय पशु समस्या मे रुचि लेनेवाले अनेक लोग सम्मिलित हुए थे। इस सम्मेलन की अध्यक्षता विनोवा भावे ने की थी। उद्घाटन महात्मा गाधी ने किया था। श्री विनोवा भावे और गाधीजी ने अपने भाषणों में जमनालाल जी की अस्वस्थता का उल्लेख किया था, पर उन्होने अपने जीवन के अतिम दिनो को गो सेवा मे लगाने का निश्चय कर लिया था। गोपुरी (गौशाला) मे उन्होंने अपने लिये एक झोपड़ी वना ली थी तथा उसमे संन्यासी की तरह रहने लगे थे। पर विधाता को और ही कुछ मजूर था। उनका अकस्मात् देहात हो गया।

श्री घनश्यामदास बिड़ला ने जमनालालजी के देहावसान के समय की कुछ मार्मिक घटनाओ का उल्लेख किया है। जमनालालजी की मृत्यु के कुछ मिनट पहले गाधीजी को उनकी वीमारी की खवर दी गई। गाधीजी तुरत वर्धा के लिये चल पड़े पर वे उनकी मृत्यु के कुछ मिनट ही वाद वहां पहुच सके। उन्होन आते ही जमनालालजी के माथे पर हाथ रख दिया और वैठ कर उनकी ओर देखते रहे। श्रीमती जानकीदेवी शोक सागर में डूवी हुई थी। वह गाधीजी से वार वार कह रही थी कि मेरे पति को जीवित कर दो। वापू ने जानकीदेवी को सात्वना देते हुए कहा, "जानकी, अव तुम्हें रोना नही चाहिये, तुम्हे धीरज रखना चाहिये तथा वच्चो को धीरज वधाना चाहिये। जमनालालजी जीवित हैं। उनके लिये मृत्यु कहां है जिनकी कीर्ति अमर है। उनकी मृत्यु तो तव ही होगी जव तुम उनके पदचिह्नो पर नहीं चलोगी।"

इससे जानकीदेवी को सात्वना नहीं मिली। वह गाधीजी से प्रार्थना

करती ही रही कि जमनालालजी को जीवित कर दीजिये। उन्होने पूछा, "क्या सचमुच में उनका देहात हो गया ? क्या आप उन्हें जीवित नही कर सकते ?"

वापू ने कहा, "मै तुम्हे झूठी सात्वना नही देना चाहता। जमनालाल की शारीरिक मृत्यु हो गई पर असली जमनालाल तो जीवित है। उनको भविष्य में जीवित रखने का दायित्व तो तुम पर है।"

उनका शोक किसा गोतामी की स्मृति दिलाता है। वह कहती ही रही "मेरे पति को जीवित कर दो पर जव उन्हें अनुभव हुआ कि यह सभव नही है तो उन्होने कहा," "वापू, अव मुझे सती हो जाने दो। क्या मै इन दिनो सती नही हो सकती ? मै आप को विश्वास दिलाती हू कि मुझे अग्नि मे कोई कष्ट नही होगा। मै आराम से जल जाऊगी। मुझे सती हो जाने दीजिये।"

वापू ने उनसे कहा, "अपने को जला कर भस्म करने में वीरता नही है। हजारो स्त्रिया अपने पतियो के साथ जल चुकी है। इसमें एक प्रकार की वीरता अवश्य है, पर यह वास्तविक वीरता नही है। सच्ची सती होना असाधारण वात है। सती को अपना शरीर भस्म करने की आवश्यकता नही है। इसमे कुछ भी नही है। सभी दोपो को भस्म करना ही सती का असली कार्य है। तुम्हे त्याग की मूर्ति वन जाना चाहिये। यही असली सती होना है।"

जमनालालजी की साध्वी पत्नी वापू के शव्दो के अनुसार सच्ची सती हो गईं। उन्होने अपने जीवन को देश सेवा कार्य मे लगा दिया तथा अपने पति सचालित कार्यो को पूरा करने लगी।

जमनालालजी का त्यागपूर्ण जीवन था। ऐसे लोग मृत नही है। उनके कार्य उन्हे जीवित रखते है तथा दूसरो को प्रेरणा प्रदान करते है। श्रीमती सरोजिनी नायडू के शव्दो में, "जमनालालजी ने अपने सीधे ढग से लगनपूर्वक भारत की सेवा की। जव राष्ट्रीय सघर्ष का इतिहास लिखा जायगा तव उन देशभक्तो की कोटि मे जो देश की स्वतत्रता के लिये कोई भी त्याग करने में नही झिझके, उन्हें सम्मानपूर्ण स्थान अवश्य मिलेगा।